7177

सौमसी

tharahkardu.in

सोमसी

हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी का त्रैमासिक मुख-पत्र

वर्ष 3 | जुलाई, 1977 | अंक 3

महासू विशेषांक

प्रबन्ध-सम्पादक
एच० सी० पराशर

सम्पादक
डा० बंशी राम शर्मा

परामर्श-मण्डल
1. आचार्य दिवाकर दत्त शर्मा
2. श्री खेम राज गुप्त
3. श्री हरि राम जसटा
4. श्री मौलू राम ठाकुर

सहयोगी
सरोज शर्मा

मुख पृष्ठ
औमप्रकाश

प्राप्ति-स्थानः
हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा-अकादमी, परी महल,
शिमला-171009

सोमसी

(महासू विशेषांक)

वर्ष 3 ग्रंक 3

पूर्णांक--11

जनवरी, अप्रैल, जुलाई तथा अक्तूबर में प्रकाश्य।

लेखक के विचारों तथा दिए गए तथ्यों से सम्पादक की सहमति आवश्यक नहीं।

प्रकाशित रचनाओं को पूर्ण अथवा आंशिक रूप में उद्धृत करने के लिए सचिव, हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी, परी महल, शिमला-9 की अनुमति अनिवार्य है।

वार्षिक चंदा--१२ रु०

एक प्रति--३ रु०

विषयानुक्रमणिका

लेख	लेखक	पृ०
1. हिमाचल लोक-नृत्य परम्परा	--हरिराम जसटा	1
2. महासुई क्षेत्र एवं जनसंख्या		8
3. ऐतिहासिक पविप्रेक्ष्य	--गोवर्धन सिंह	10
4. धार्मिक सन्दर्भ	--कलावती जसटा	12
5. मेले और त्योहार	--सी० आर० बी० ललित	17
6. विवाह-गीत	--जगदीश शर्मा	23
7. लोक संगीत	--'सलीम'	41
8. वेशभूषा और खान पान	--भुवनेश्वरी	46
9. महासुई उपभाषा और साहित्य	--मीना ठाकुर	43
10. हिन्दी महासुई तुलनात्मक वाक्यावली	--जसटा	51
11. तुलनात्मक वाक्याध्ययन		61
12. फागली	--नरेन्द्र शर्मा	65
13. Studies in the Systematics of Himachali Linguistics	—Dr. Siddheshwar Varma	68
14. कहलूरी कविता : एक अध्ययन	--सरोज शर्मा	71
15. लोकोक्तियों में गद्दी जन-जीवन	--बसन्त शर्मा	74
16. निष्पादन कलाओं के सम्बन्ध में अकादमी की गतिविधियां		77
17. महासुई लेखक परिचय		82
18. पुस्तक समीक्षा		85
19. सार-संक्षेप विचारावली		88

सम्पादकीय

पुराणों में एक रोचक कथा आती है कि अति प्राचीनकाल में विन्ध्य पर्वत संसार का सर्वाधिक ऊंचा पर्वत था और महर्षि अगस्त्य उसके गुरु थे। मात्र सूर्य ही उसकी चोटियों से ऊपर चमकता हुआ इधर उधर प्रकाश फैलाता था। एक बार विन्ध्य पर्वत को इस बात की ईर्ष्या हुई कि सूर्य उसकी शृंखलाओं से ऊंचा क्यों है। वह अधिक ऊंचा होता गया और उसने सूर्य का मार्ग अवरुद्ध कर दिया जिसके कारण सृष्टि के समाप्त होने का भय उत्पन्न हो गया। बाद में देवताओं ने महर्षि अगस्त्य से प्रार्थना की कि वे अपने शिष्य विन्ध्य पर्वत को समझा कर नीचा करें ताकि सूर्य का प्रकाश पृथ्वी पर चारों ओर फैल सके। अगस्त्य विन्ध्य पर्वत के पास गए और उसे कहा—वत्स! मैं दक्षिण देश की यात्रा पर जाना चाहता हूं परन्तु आपकी ऊंची चोटियों को पार करने की सामर्थ्य मुझ में नहीं है, अतः यदि आप थोड़ा झुक जाएं और मेरे वापिस आने तक उसी स्थिति में रहें तो मेरी यात्रा सम्भव हो सकेगी। विन्ध्याचल को अपने गुरु की आज्ञा शिरोधार्य करनी ही थी अतः उसने अपना मस्तक झुका दिया। अगस्त्य ऋषि दक्षिण चले गये और वर्षों तक प्रतीक्षा करवाने के पश्चात् भी कभी उत्तराखण्ड में वापिस नहीं आये, अतः विन्ध्याचल को नतमस्तक ही रहना पड़ा।

यह कथा वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित नहीं है परन्तु जिन प्रतीकों का प्रयोग इसमें हुआ है उस से प्राचीन मनीषियों की समन्वयकारी भावना का भरपूर दिग्दर्शन होता है। भारतवर्ष के उत्तर व दक्षिण के दो खण्ड सांस्कृतिक दृष्टि से किस प्रकार एक दूसरे के समीप हैं, यह बात इस कथा से भली प्रकार स्पष्ट हो जाती है। हम दक्षिण में पवित्र भाव से जगन्नाथपुरी, द्वारिका, महाबलिपुरम् तथा तिरुप्पली आदि तीर्थों की यात्रा करते हैं और दक्षिणवासी हिमालय में स्थित स्थानों को 'देवभूमि' मानते हैं। हिमालय को हमारे धर्म-शास्त्रों में संसार का पवित्रतम स्थान माना गया है। मनु ने ब्रह्मावर्त क्षेत्र को देवताओं द्वारा निर्मित बताया है। ब्रह्मावर्त के समीप ब्रह्मर्षि देश, कुरुक्षेत्र, मत्स्यदेश, पांचाल क्षेत्र तथा सौरसेन क्षेत्र की स्थिति मानी गई है। अग्नि तथा सूर्य आदि उष्णताप्रधान देवताओं की कल्पना आर्यों को शीतप्रधान देश का बासी बताती हैं। कुछ भी हो, विश्वस्त लिखित इतिहास के अभाव में हमें हिमालय के भीतरी भागों में प्रचलित जनश्रुतियों तथा जनसंस्कृति के अध्ययन से मूल्यवान निष्कर्ष निकालने में मदद मिल सकती है।

इस अंक को हम 'महासू विशेषांक' के रूप में प्रकाशित कर रहे हैं। महासू जनपद जिसे वर्तमान समय में शिमला तथा सोलन जिलों में विभक्त किया गया है, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण इकाई है। इस क्षेत्र का हमारे पौराणिक तथा परम्परागत इतिहास से घनिष्ठतम सम्बन्ध है। प्रचलित त्यौहार-उत्सवों, विवाहादि प्रथाओं तथा सांस्कृतिक मान्यताओं का अध्ययन करने से ऐसा प्रतीत होता है कि इस क्षेत्र में संस्कृति की अनेक परतें विद्यमान हैं। विराटनगर, शोणितपुर तथा पौराणिक राजा शम्बर और दिवोदास से सम्बद्ध

इस धरती पर आधुनिक तथा प्राचीन इतिहास का समन्वय मिलता है । इसी क्षेत्र में बलग के स्थान पर वामन रूप धारण करके विष्णु ने राजा बलि को पाताल भेजा था। इस क्षेत्र में अनार्य वर्ग के भूण्डा जैसे त्यौहार, पाण्डवों व कौरवों के रूप में शाठे (60) तथा पाशे (5) का तीर कमान का 'ठोडा' उत्सव, कुछ क्षेत्रों में 'मुजरा' प्रथा का प्रचलन, बरात में वधु का वर के घर जाना, खून्द प्रथा तथा लोक-देवताओं के प्राचीनतम रूप, आदि विशिष्ट बातें महत्वपूर्ण संकेत प्रस्तुत करती हैं। इस क्षेत्र में प्रचलित सम्पूर्ण लोक सांस्कृतिक गतिविधियों का समावेश इस छोटे से अंक में सम्भव नहीं था परन्तु जो कुछ सम्मिलित किया जा सका है वह अनुसन्धित्सुओं तथा विज्ञ पाठकों के चिन्तन धरातल को नई दिशाएं देगा, ऐसा विश्वास है । किसी भी क्षेत्र में शोध की अन्तिम सीमाएं निर्धारित करना सम्भव नहीं होता अतः प्रस्तुत प्रयास एक क्षेत्र-विशेष की संस्कृति तथा भाषा के सम्बन्ध में विवरण मात्र कहा जा सकता है ।

इस पत्रिका के अगले अंकों में हम प्रदेश के अन्य जनपदों के सम्बन्ध में इसी प्रकार की विशिष्ट सामग्री प्रकाशित करते रहेंगे ताकि समय आने पर प्रदेश के सांस्कृतिक इतिहास के लिये पर्याप्त तथा प्रामाणिक सामग्री जुटाई जा सके और जनपरम्पराओं की विच्छिन्नप्राय लड़ियों को चेतना प्रदान की जा सके ।

—बंशी राम शर्मा

हिमाचल लोक-नृत्य परम्परा

—हरि राम जसटा

शाली बाज़ारौ दी चिकनि माटी
बैठी जा भौंहिन्दी शुणि ले नाटी।

—एक महासुई लोकगीत से

व्यक्ति या समूह का अपने देश से सम्बन्ध कुछ ऐसा होता है, जैसा उसका अपनेपन तथा अपने माता पिता से, जिसकी गोद में बैठ कर व्यक्ति या व्यक्तिसमूह विकसित होता है। उससे उसका सहज स्नेह हो जाना स्वाभाविक है। इस प्रसंग में आदिकवि बाल्मीकि की यह पंक्ति सार्थक है 'जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी'। अपनी मां—अपने जन्म, ग्राम, अपने घर और अपने पड़ोस के माध्यम से ही हम अपने प्रदेश या देश को पहचान पाते हैं। उनके प्रति प्यार से ही हम देश भक्ति की ओर अग्रसर होते हैं। हम अपने निकटस्थ वातावरण से ही समूचे क्षेत्र या देश के भूगोल-इतिहास, कला और लोक जीवन के प्रति रुचिशील हो जाते हैं। अपने क्षेत्र के अतीत, उसकी श्रेष्ठ परम्पराओं, उसके उज्जवल और उत्कृष्ट सांस्कृतिक पक्षों और उसकी विधि एवं रीति-नीति की जानकारी से देशभक्ति का संवर्द्धन होता है।

आज भी, जिस देश में कला का लोक-जीवन से गहरा सम्पर्क बना हुआ है वहां के लोकनृत्य एवं लोकगीत वहां की संस्कृति के सच्चे प्रतीक हैं। यही लोकनृत्य जब लोकजीवन के सम्पर्क को खो बैठते हैं और उनका लोकरंजनात्मक गुण कम होने लगता है तो वे कुछ ही लोगों की सम्पति बन जाते हैं। भारत के प्रसिद्ध नर्तक देवी लाल सामर के शब्दों में—उनमें धीरे धीरे शास्त्रीयत्व का समावेश होने लगता है और वे एक विशेष कलात्मक रूप धारण कर लेते हैं। प्रत्येक देश की शास्त्रीय कलाओं का यही इतिहास है। जिस प्रकार भाषा अपना प्रारम्भिक और लौकिक रूप खोकर कुछ ही पंडितों और आचार्यों के प्रयत्नों से क्लिष्ट और साहित्यिक बन जाती है, उसी प्रकार लोकनृत्य भी कुछ विशेषज्ञों के प्रयास से शास्त्रीय नृत्यों का रूप धारण कर लेते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि प्रत्येक शास्त्रीय कला की जननी लोककला है। अतः यदि हमें अपनी लोक संस्कृति को जीवित रखना है तो इन लोक कलाओं को जीवित रखना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि उनमें जनता के प्राणों का सच्चा स्पन्दन है।

हिमाचल प्रदेश जैसे दुर्गम पहाड़ी क्षेत्र में जहां जीविकोपार्जन अत्यन्त कठिन है, लोकरंजन के साधन सरलता से उपलब्ध नहीं, लोक कलाओं के अनेक रूप अभी तक अपने रंगीन, सम्पन्न और समृद्ध रूप में विद्यमान हैं, जिनमें भरत नाट्य, कथकली, कुची पुड़ी, मेलाटुर, कथक और मनीपुरी नृत्य जैसे प्रामाणिक और शास्त्रीय नृत्यों का विकास नहीं हो सका। इसलिए शास्त्रीय नृत्य तथा यहां के लोक नृत्यों में आज भी काफी अन्तर है। हिमाचल प्रदेश के सभी लोक नृत्य व्यावसायिक नृत्य न होकर जातीय नृत्य हैं इसलिये इनमें लौकिक और सांस्कृतिक पक्ष अधिक है। इनमें आज भी यहां के पर्वतीय जीवन की आत्मा का निवास है। और यहां के लोक

जीवन की सादगी, आनन्दानुभूति, तल्लीनता, तन्मयता, शारीरिक अभ्यास का अपूर्व परिचय मिलता है । जयशंकर प्रसाद ने एक जगह भारतीय कृषक का सजीव चित्र इन पंक्तियों में खींचा था—'कठिन जेठ की दोपहरी में तप्त धूली में संत कृषक तपस्वी तप करते हैं'। तप से स्वेदित तन हिमाचल वासियों का जीवन भी इतना ही कठिन, कठोर और रूक्ष है । फिर भी यहां के परिश्रमी पहाड़ी लोग अपने सुमधुर लोक गीतों और नृत्यों द्वारा मुरझाये हुए प्राण स्रोत को हिमालय की गोद में अठखेलियां करती हुई पावन गंगा मैया की धारा समान उल्लासमय और नन्दन वन के कल्प वृक्ष की तरह सब ओर सुख और आनन्द बिखेरते हैं ।

हिमाचल प्रदेश में अतीत गौरव के प्रतीक लोक-नृत्य किसी ग्राम्य-उत्सव के समय प्राय: अपने पुराने-पन में भी सौंदर्य को समोये मानव मन को आनन्दित एवं आकर्षित किए रहते हैं । उनका मूल उद्देश्य सामूहिक मनोरंजन और लोक मंगल की भावना है । लोक नृत्यों का मूल स्रोत हमारी लोक संस्कृति है जिसे स्थान और काल की दूरी भी छिन्न भिन्न नहीं कर सकती । इस पहाड़ी प्रदेश के लोक नृत्य की अंतरात्मा में मानव की सौंदर्य बोधि चेतना, पर्वतीय लोक जीवन के हास और रुदन की स्वस्थ कला परम्परा, जन मन की उमंगें, प्रकृति का रंग वैभव, यहां का ग्राम जीवन-संघर्ष और श्रम और मन की बंधन मुक्त उड़ान प्रतिबिम्बित होती है ।

प्रकृति समान सरल हिमाचल के युवक और युवतियां बाल्यकाल में ही, जैसा वह वृद्धों को करते देखते हैं, उसी परिपाटी को अपने स्वभाव में सम्मिलित कर लेते हैं । इस तरह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हिमाचल के लोक-नृत्य आगे बढ़ते रहे हैं और उनमें समय समय पर परिवर्तन, संशोधन और रोचकता में विकास होता रहा है । चूंकि हिमाचल के लोक नृत्य किसी विशेष शास्त्रीय नियम से बंधे हुए नहीं हैं, इसलिए वे अत्यन्त सरल, और हृदयग्राही है, और उनकी विशिष्ट परम्परा है । इन लोक नृत्यों में पर्वतीय लोक जीवन के उदय, स्वभाव, गति की तीव्रता, अंग संचालन में एक आकस्मिकता, कठोर मुद्रा, छोटे छोटे आवेश पूर्ण नृत्य खंडों का रूप अपने में पहाड़ी जीवन की प्राकृतिक शोभा और कठिन जीवन, धार्मिक, सामाजिक तथा अनेक रूढ़िवादी संस्कारों और विश्वासों की सुन्दर झलक मिलती है । हिमाचल के अधिकांश लोकनृत्य, सामूहिक उल्लास, सुख दुख के भावपूर्ण क्षण और सामाजिक अवसरों से ही संबंधित हैं। चाहे कोई लोकनृत्य ऋतु, उत्सव के सम्बन्ध में हो या धार्मिक और सामाजिक उत्सव के रूप में आस पास के सभी पर्वतीय ग्रामों के लोग उसम ठाठबाट के साथ सम्मिलिल होते हैं । यहां के लोकनृत्य वैयक्तिक कला विकास के साधन मात्र नहीं ।

हिमाचली लोकनृत्यों के साथ गीत इन्हें चार चांद लगा देते हैं। नि:सन्देह लोकनृत्य और गीत का जन्म संघर्ष और श्रम साधनों के अवसर पर दिखाई जाने वाली भावमयी मुद्राओं के उन चरम क्षणों में हुआ, जब जीवन का सौंदर्य जाग उठा और गीत फूट पड़े । चिरकाल से समान उदय और प्रयोजन के कारण, हिमाचल के लोक-नृत्य और गीत अभिनयपरक रहे हैं और पर्वतीय सामाजिक जीवन को सचित्र, सजीव और प्रेरणामय बनाते हुए ये लोक-नृत्य लोक-गीतों से विभूषित हैं । इनका प्रवहमान संगीत नृत्य की ताल लय को कला-सौष्ठव प्रदान करता है और तब दर्शक की आत्मा मन्त्रमुग्ध सी अलौकिक आनंद का रसास्वादन करने लगती है । हृदय आकाश में सप्तरंगी इन्द्रधनुष का विमान फैल जाता है, नेत्र आत्म-विभोर हो उठते हैं। मन मोर नाच उठते हैं और मनों की सहज अभिव्यक्ति मधु और अमृत के गीत गाने लगती है । वास्तव में लोक जीवन की प्रत्येक दिशा नृत्य से व्याप्त है ।

हिमाचल प्रदेश के विभिन्न भागों में प्राय: विभिन्न लोक-नृत्य प्रचलित हैं । इसी प्रकार लोक नृत्य में गाये जाने वाले लोकगीत और वेशभूषा भी विभिन्न होते हैं । इनमें से कुछ नृत्यों में केवल स्त्रियां और कुछ

में केवल पुरुष ही नाचते हैं। परन्तु ऐसे भी लोक नृत्य हैं जिनमें स्त्री पुरुष दोनों ही नाचते हैं। इनमें अधिक सामूहिक नृत्य हैं परन्तु कुछ व्यक्तिगत नृत्य भी हैं। प्रायः सभी लोक नृत्यों के साथ नृत्य गीत गाये जाते हैं। इन लोकगीतों को बहुधा स्वयं नर्तक दल गाते हैं। प्रत्येक लोकगीत के साथ लोक वाद्य नरसिंघा, शहनाई, ढोल, नगारा, बांसुरी, करनाल, खंजरी, करताल, डमरू इत्यादि बजाए जाते हैं। यदि अन्य लोकवाद्य न भी हों, ढोलक या खंजरी के बिना गुजारा नहीं है। ये लोक गीत लोक वाद्यों एवं लोकनृत्य की त्रिवेणी इस पर्वतीय प्रदेश में अनन्तकाल से प्रवाहित होती रही है।

यदि आप कभी वर्ष भर में जुड़ने वाले अनेक मेलों, उत्सवों या त्यौहारों के समय हिमाचल के किसी ग्राम में से होकर गुजर रहे हों तो सहसा ढोलक या खंजरी की मधुर ध्वनि सुनकर आप स्थानीय ग्राम वासियों को गांव की किसी खुली जगह पर एकत्रित पायेंगे और लोक नृत्य का आनन्द उठाते हुए देखेंगे। पहाड़ों के इन छोटे छोटे ग्रामों में पहाड़ी लोक कला की इस रस भरी समृद्ध थाती, को अपने प्राचीन रूप एवं वैभव में सुरक्षित पायेंगे। इन लोक नृत्यों की भावना भर्तृ हरि लोक गीत में कितने सुन्दर ढंग से प्रस्तुत हुई है।

लागी साधु री किन्दरी लागीज़ सै किन्दरी री बाई,
आमा बोलो ली बुढ़ड़ी बै मुंदी नाचणे री आई।
एकि तारौ री किन्दरी बेलौ सै नीखी-नीखी बानी,
नाचौ लहोडलौ बौड़ले साथी सै चौबीशौ रानी।

हिमाचल प्रदेश में प्रधान रूप से लोक नृत्यों को दो प्रमुख श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है। प्रथम आदिवासी लोक नृत्य जो प्रायः लाहौल-स्पिति, किन्नौर, तथा पांगी और गद्दियों में प्रचलित हैं। द्वितीय पहाड़ी लोक नृत्य जो शेष सारे पहाड़ी क्षेत्र (हिमाचल प्रदेश) में लोक-प्रिय हैं। इसी प्रकार इन लोक नृत्यों के साथ गाये जाने वाले प्रत्येक नृत्य गीत की भाषा, शैली, छन्द, धुन, लय इत्यादि में भी भिन्नता है।

शुभ अवसर, त्यौहार और अनेक सामाजिक मेल मिलाप के हर्षोत्सवों को मनाने के लिये लोक-नृत्यों की विशेष भूमिका होती है, इसके लिये कोई पूर्व अभ्यास की आवश्यकता नहीं। क्षणिक प्रेरणा पर भी हिमाचली नाचना पसन्द करते हैं। इन परम्परागत और मनोहारी लोक नृत्यों को देख प्रत्येक दर्शक पर इनके लय, सौंदर्य-भावना की गहनता प्रकट होती है।

जब हिमाचल में कहीं भी चलचित्रों, आधुनिक मनोरंजन के साधनों का नामों-निशान भी नहीं था तब ये चित्ताकर्षक लोक-नृत्य लोक जीवन को सरस बनाते रहे और साधारण लय, तारतम्य और गीतों के द्वारा लोक नृत्य और लोकगीत पर्वत पुत्री के दैनिक परिश्रम और रूखे जीवन में उत्साह और रंग भरते रहे हैं। वनों, पहाड़ों, खेतों, खलिहानों में दिन भर के कठिन कार्य के पश्चात् स्त्री-पुरुष गांव के खुले मैदान में एकत्र होकर लोकनृत्य द्वारा अपने दैनिक जीवन की कठोरता और करुणा को भुलाते रहे हैं। यह कार्यक्रम उत्सवों को छोड़कर प्रायः सर्दियों में अधिक चलता है। परन्तु ज्यों-ज्यों शिक्षा का प्रसार बढ़ा और सिनेमा, रेडियो और अन्य मनोरंजन के साधन गांव गांव में पहुंचने लगे, इस ओर से नई पीढ़ी का ध्यान धीरे धीरे हटता जा रहा है। उन पर आधुनिकता का आवरण चढ़ता जा रहा है। लोक जीवन की श्रेष्ठ थाती के प्रति उनकी मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया हीन भावना और लज्जा की ही होती है। इसका कारण शायद शिक्षित वर्ग एवं नगर की सभ्यता से प्रभावित वर्ग की यह धारणा है कि लोक नर्तन पिछड़े एवं आदिवासी लोगों की आदिम सभ्यता का चिन्ह है। ज्यों ज्यों सभ्यता एवं संस्कृति का विकास होता जाता है, लोक जीवन का यह आकर्षण भी विस्मृति के गर्त में समा जाता है।

हिमाचल के लोक नृत्यों का आधार, यहां की प्रकृति से गहरा सम्बन्ध होने के कारण, उनके लोक नृत्य-प्रकृति के अनुरूप ही सुन्दर है, जिनमें विविधता और रंग का वैभव प्रदर्शित होता है। इनके द्वारा लोक जीवन की आन्तरिक भावनाओं और स्वभाव की अत्यन्त मनोहर झलक मिलती है। फलतः निपुणता के लिए स्वतन्त्र आविर्भाव का अवसर मिलता है जिसके द्वारा ग्राम्य-समुदाय को सामूहिक आनन्द का आभास होता है। इसी कारण हिमाचल के लोक नृत्य शहरी जीवन के प्रभाव से दूर रह पाये हैं।

जब लोकवादक अपने विशेष वाद्यों पर मधुर ध्वनि की गूंज बिखेरता है तो युवक हो या वृद्ध, सब एक दूसरे का हाथ पकड़ कर गोलाकार नृत्य आरंभ कर देते हैं। नृत्य लोक-वाद्यों और लोक नृत्यों की ताल पर तीव्र और उग्र हो जाता है। यह मालूम करना कठिन हो जाता है कि कब इसका समय पूरा हो गया और इसमें श्रेष्ठ नर्तक कौन है। दक्ष नर्तक के नेतृत्व में नर्तक दल दायीं दिशा में ताल पर पग बढ़ाता है। कभी छोटे कदम कभी बड़े, कभी उछाल, कभी धीमी चाल, कभी आगे, कभी पीछे झुकना, कभी दौड़ और छलांगें कभी घुटने झुका कर, कभी कैंची से कदम, इसी प्रकार नर्तक चलता रहता है। कई बार जब कोई दक्ष लोक गायक या लोक वादक नहीं होता तब नर्तक दल स्वयं ही लोक गीत गाता हुआ नाचता है, दो या तीन नर्तक या गायक आरम्भ में गाते हैं और शेष सब बाद में उन गीतों की पंक्तियों को दोहराते हैं। प्रायः सभी लोक नृत्य विलम्बित लय से शुरू होकर द्रुत लय पर समाप्त हो जाते हैं। परन्तु इस नियम का ध्यान केवल कुछ विशेष अवसरों पर ही रखा जाता है। ऐसे अवसरों पर प्रायः नृत्य गीत की गूंज सहसा वायुमण्डल में बिखर जाती है और एक अदभुत वातावरण की रचना हो जाती है। बांसुरी की मधुर लोकधुन से नृत्य आरम्भ होता है :—

कृष्ण जीए मुरली बाजै
मुरली बाजी, मुरली बाजै
मुरली शुणियों नाचदै आजै
नाचदे आजै, नाचदै आजै।

ऐसे ही लोक गीतों की लय के साथ नर्तक दल शरीर के विभिन्न अंगों का संचालन करते हुए कदम से कदम मिलाकर मस्त होकर नृत्य करते हैं। नर्तक दल अपने क्षेत्र में प्रचलित सभी प्रकार के लोक प्रिय लोकनृत्य का प्रदर्शन करते हैं। परन्तु यह प्रायः दक्ष नर्तकों एवं लोकप्रिय वाद्य के वादक पर निर्भर करता है। लोग प्रायः जब इस प्रकार की नृत्य शैली से ऊब जाते हैं तो कुछ देर बाद नृत्य शैली का प्रदर्शन करने के लिए दूसरा नृत्यगीत आरम्भ हो जाता है:—

खेलादि एबै मेरी भाव रूपीए ओ, भाव रूपीये ओ,
कोठै रै खोलै मेरी भावरूपीये, भावरूपीयै ओ।
भोटी रै खोलै मेरी भावरूपीए, भावरूपीए ओ,
आंगडू शोले मेरी भावरूपीए, भावरूपीए ओ।

नृत्य गीत के अनुरूप नृत्य शैली में भी परिवर्तन आ जाता है।

तीसरे लोकगीत की सुमधुर ताल और लय के साथ जब लोक वाद्य बजते हैं, तो लोकनृत्य अपने पूरे यौवन पर आ जाता है:—

लम्बी बड़ी सूरतां वाली, तू मेरे कम्मे बीण लग्गियें।
हाय वो प्यारिये हाय वो दुलारिये,
पतली कमर झुकी जांदी तू खोदा घड़ा चुक लग्गियें।
हाय वो प्यारिये, हाय वो दुलारिये।

लोक नृत्य को तीव्र गति देने के लिए तीव्र ताल पर लोक गीत गाया जाता है जैसे:—

> लाल चिड़ीए सैरे न जाणा, सैरे न जाणा...............
> सेरे पाका मेरे गीहूं रा दाणा, गीहूं रा दाणा............
> गीहूं रा दाणा घरे ले आणा, घरे ले आणा.............
> गेहूं रा दाणा जावा नी खाणा, जावा नी खाणा ....

इन सुमधुर नृत्यगीतों से स्थानीय लोगों को अपने ग्राम, पहाड़ों, वनों, खेतों, खलिहानों, नदी नालों, झीलों, झरनों, देवी देवताओं, वीरों, पूर्वजों सुन्दर और निष्ठुर प्रेमी-प्रेमिकाओं से टपकती है और नर्तक भाव विभोर होकर झूम झूम जाते हैं। मीठे और सुरीले कण्ठों से गाए जाने वाले लोक-गीतों के साथ जब लोक-वाद्य बजने लगता है तो नर्तक दल ही नहीं, देवी देवता भी पालकियों में नाचने (देव खेल) लगते हैं और दर्शकगण आत्मविभोर होकर तन्मयता से इनका आनन्द उठाते हैं।

मानव-इतिहास से यह स्पष्ट होता है कि प्रायः सभी प्राचीन सभ्यताओं में प्रत्येक धार्मिक एवं सामाजिक उत्सवों में नृत्य का महत्वपूर्ण स्थान होता था। लोक नृत्य एक प्रकार का धार्मिक अनुष्ठान बन गया था। चूंकि उन दिनों सामूहिक जीवन में धर्म की महान भूमिका रही है, इसलिये नृत्य भी राष्ट्रीय जीवन का विशेष अंग रहा है। प्राचीन भारत में नृत्य भगवान शिव-नटराज की देन समझा जाता रहा है। परम्परा के अनुसार शिव और पार्वती ने नृत्य की दो महान शाखाओं ताण्डव एवं लास्य का संचार करना और संत महात्माओं को शान्ति प्रदान करना।

हिमाचल प्रदेश की सांस्कृतिक एवं कला-परम्परा को भी एक प्रदेश विशेष की संस्कृति एवं कला के रूप में देखना उसकी एवं देश की महान गौरवशाली परम्परा का अपमान करना है। हिमाचल की कला परम्परा का सदैव शेष भारत से गहरा सम्पर्क रहा है और उसे आत्मसात किया है। समय के थपेड़ों ने इन्हें बरबाद करने के लिये कोई कसर शेष नहीं रखी; परन्तु फिर भी जीवित रह सकी है, तो एक बात स्पष्ट है कि इसकी नींव सुदृढ़ है और लोक-जीवन से इसका अटूट सम्पर्क सदैव रहा है। हिमाचल प्रदेश में लोक परम्परा को सुरक्षित रखने की दिशा में कुछ कदम उठाए गये हैं, जैसे प्रत्येक राष्ट्रीय एवं स्थानीय मेलों और युवा उत्सवों में लोक-नृत्यों का प्रदर्शन एवं सरकार द्वारा प्रोत्साहन। फिर भी लोक-नृत्य परम्परा को सुरक्षित रखने और उसे विकसित रूप देने की आवश्यकता है। राष्ट्रीय जीवन में जो सुन्दर है, श्रेष्ठ है, उसकी अपेक्षा नहीं की जानी चाहिए। उसको तो संरक्षण एवं प्रोत्साहन मिलना चाहिये, ताकि राष्ट्र को एक सूत्र में बांधने वाली ये परम्पराएं सप्राण होकर राष्ट्रीयता की भावना को सुदृढ़ कर सकें और उसमें सुमधुरता और प्रकाश का संचार कर सकें।

लोकनृत्यों का वर्गीकरण

वैसे तो हिमाचल प्रदेश के किसी क्षेत्र को लोक-नृत्य की गिनती की सीमा में नहीं बांधा जा सकता और न ही शास्त्रीय नृत्यों की तरह इन्हें किसी विशेष शैली या नियमों के बंधनों में जकड़ा जा सकता है। प्रधानतया हिमाचल प्रदेश के लोक नृत्यों की संख्या भी उतनी ही अधिक है जितनी ग्राम समुदाय की। कुछ लोक नृत्यों का नामकरण भी ग्रामों के आधार पर हुआ है जैसे-सांगला नृत्य, पंगवाल नृत्य, इत्यादि। फिर भी प्रत्येक क्षेत्र में कई प्रकार के लोक नृत्य अन्य की अपेक्षा अधिक लोक-प्रिय रहे हैं। ऐसे ही कुछ लोक नृत्यों का परिचय देने का प्रयत्न यहां किया गया है—

हिमाचल प्रदेश के लोक-नृत्यों में भाग लेने वाले लोगों की संख्या की दृष्टि से ये दो प्रकार के होते हैं।

(क) वैयक्तिक नृत्य—ऐसे लोक नृत्यों में तुरिण और मुजरा नृत्य गिने जा सकते हैं। इस नृत्य में एक या दो नर्तक नाचते हैं। लोक गायक, श्रोता और दर्शक उनको घेर कर बैठ जाते हैं। लोक गायक खंजरी, ढोलकी, गुज्जू, खड़ताल या हाथ की तालियों से लोक गीत की धुन और लय उठाते हैं और नर्तक धीरे धीरे उठ कर चारों और घूम घूम कर अपने शरीर के हर अंग को लोक गीत की लय पर नचाता है। कभी कभी बैठे लोक गायकों के दो दल होते हैं। एक दल लोक गीत की पंक्तियां आरम्भ में गाता है, दूसरा दल उन्हें उसी ढंग से दोहरा देता है। यह नृत्य गांव के छोटे उत्सवों पर प्रायः रात को होता है। ऐसे लोक नृत्यों का प्रचलन अधिक शिमला, सिरमौर, कुल्लू, सोलन तथा मण्डी के ग्रामीण क्षेत्रों में है।

(ख) समूह लोक नृत्य– ऐसे लोक नृत्यों का प्रदर्शन प्रत्येक बड़े उत्सव, मेलों-ठेलों पर होता है। यह प्रदेश के प्रत्येक भाग में और बाहर भी अधिक लोक प्रिय है। ऐसे सामूहिक नृत्यों का परिचय कुछ विस्तार से यहां दिया जा रहा है –

इन लोक नृत्यों का वर्गीकरण लिंग, जाति के आधार पर भी किया जा सकता है। जैसे:—

(क) महिला लोक नृत्य–लोक नृत्यों में केवल स्त्रियां ही भाग लेती हैं। इन लोक-नृत्यों में हिमाचल के अनेक नृत्य गिने जा सकते हैं। जैसे चम्बा के धुरैयी, डांगी, और घोड़ायी लोक नृत्य, लाहौल स्पिति का जोमो लोक नृत्य, कुल्लू का लालड़ी लोक नृत्य शिमला का तुरिण नृत्य और कांगड़ा क्षेत्र के अनेक लोक नृत्य गिने जा सकते हैं।

(ख) पुरुष लोक नृत्य– ऐसे लोक नृत्यों में केवल पुरुष ही नाचते हैं जैसे सिरमौर और शिमला जनपदीय क्षेत्र के जोली छट्टी, घुगती, ठोठा नृत्य, कुल्लू के तलवार, करघी, हरण लोक नृत्य, लाहौल स्पिति का मकर नृत्य आदि के नाम लिखे जा सकते हैं।

(ग) मिश्रित लोक नृत्य– हिमाचल प्रदेश में ऐसे भी असंख्य लोक नृत्य हैं, जिनमें स्त्री-पुरुष मिलकर नाचते हैं। इनमें किन्नौर के अनेक लोक नृत्य कुल्लू के नाटी, सांगला, पेखा, चम्बा के गद्दी, पंगवाल नृत्य, शिमला के नाटी, माला इत्यादि लोक नृत्य शामिल हैं।

इन लोक नृत्यों का वर्गीकरण अवसर के आधार पर भी किया जा सकता है जैसे :—

(क) धार्मिक लोक नृत्य– इन लोक नृत्यों में कांगड़ा क्षेत्र के रास, गुग्गा, भगत नृत्य, कुल्लू और शिमला क्षेत्र के देव खेल नृत्य, चम्बा का सैन नृत्य तथा लाहौल स्पिति के मकर नृत्य और किन्नौर के लामा नृत्य आ जाते हैं।

(ख) सामाजिक, धार्मिक नृत्य:– ऐसे लोक नृत्यों में प्रायः हिमाचल के सभी क्षेत्रों के सारे लोक नृत्य गिने जा सकते हैं। इसलिए ऐसा वर्गीकरण निरर्थक होगा।

(ग) अवकाश या आनन्द नृत्य:–ऐसे लोक नृत्यों में फुकी नाटी, प्रयाण नृत्य, ठोठा लोक नृत्य गिने जा सकते हैं। सच्च तो यह है, कि ऐसे नृत्यों में हिमाचल प्रदेश के सभी नृत्य आ जाते हैं।

सोमसी

tharahkardu.in

क्षेत्रीय आधार:– यहां पर मैंने उन सभी वर्गीकरण की प्रणालियों को छोड़कर हिमाचल के लोक नृत्यों का वर्गीकरण क्षेत्रीय आधार पर किया है। क्षेत्रीय आधार पर इन लोक नृत्यों को दो भागों में बांटा जा सकता है –

(क) पहाड़ी लोक नृत्य, एवं
(ख) मैदानी लोक नृत्य।

हिमाचल प्रदेश के लोक प्रिय नृत्यों में पहाड़ी लोक नृत्यों की विशेष भूमिका है और हिमाचल के सभी लोक नृत्यों की गिनती पहाड़ी लोक नृत्यों में की जा सकती है। पंजाब और हरियाणा की सीमा से लगे थोड़े क्षेत्रों में कुछ मैदानी लोक नृत्य जैसे गिद्धा और भंगड़ा भी कभी कभी प्रदर्शित होते रहे हैं।

इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि हिमाचल प्रदेश के सभी लोक नृत्यों के बारे में सविस्तार लिखना अत्यन्त कठिन है, क्योंकि जीवन की तरह इनका भी कोई छोर नहीं। लोक कलाकार की प्रतिभा, कल्पना शक्ति, सौन्दर्य, प्रेम और आवश्यकतानुसार प्रत्येक लोक नृत्य में समयानुसार परिवर्तन आते रहें हैं, और आते रहेंगे, और फिर शास्त्रीय नृत्यों की तरह इन्हें किसी निश्चित निमयों में बांधने का प्रयत्न करना असंगत और निरर्थक ही समझता हूं। इस लोक नृत्य परम्परा को जीवित रखने की आवश्यकता आज पहले से ज्यादा है। इसलिए सभी सरकारी और गैर सरकारी उत्सवों पर इनका प्रदर्शन, पंचायत, ब्लाक, जिला और राज्य स्तार पर इनके प्रोत्साहन का कार्यक्रम और राज्य स्तरीय मेलों पर सभी लोकनृत्यों का वास्तविक स्वरूप सुरक्षित रखते हुए, परम्परा को जीवित रखना लोक-संस्कृति के हित के लिए आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. कुलूत देश की कहानी (1973) — लाल चन्द प्रार्थी
2. जुब्बल के लोक नृत्य —हिमालय कल्प द्रुम, वर्ष 1 अंक 8 — गोर्वधन सिंह
3. हिमाचल के लोकनृत्य (आकशवाणी वार्ता) — मौलू राम ठाकुर
4. हिमाचल के लोकनृत्य —हिमप्रस्थ अगस्त, 1968 — हरि राम जसटा
5. हिमाचल गौरव (1971) —सन्मार्ग प्रकाशन दिल्ली—7 — हरि राम जसटा
6. हिमाचल प्रदेश के लोक नृत्य (1977) —सन्मार्ग प्रकाशन दिल्ली—7 — हरि राम जसटा

महासूई क्षेत्र एवं जनसंख्या

महासुई का केन्द्रीय क्षेत्र . वर्तमान ज़िला शिमला और सोलन है। 15 अप्रैल, 1948 में हिमाचल प्रदेश की स्थापना के साथ साथ ज़िला महासू 26 छोटी बड़ी रियास्तों के विलय के बाद बना। हिमाचल प्रदेश के राजनैतिक एवं प्रशासनिक परिवर्तन और पुनर्गठन का प्रभाव जितना महासू पर पड़ा, उतना शायद ही हिमाचल प्रदेश के किसी अन्य क्षेत्र पर पड़ा हो। पहले तो जिला की स्थापना के समय ही यहां की जनता, उनकी भाषा एवं संस्कृति को एक सांचे में ढलने में भी दो दशक लग गये। कोटखाई-कोटगढ़ जो तत्कालीन पंजाब के जिला शिमला की एक तहसील रही, को 26 जनवरी 1950 में महासू में मिला दिया गया। इस प्रकार महासू अनेक इकाइयों का क्षेत्र रहा। इनका श्रृंखलाबद्ध इतिहास एवं लोक संस्कृति की रेखायें कुछ बिखरी और धूमिल सी हैं जिन्हें एकत्रित कर उभारना होगा।

क्रम सं०	नाम रियासत	क्षेत्रफल वर्गमील	194.1 जनसंख्या	वर्तमान जिला
1	2	3	4	5
1.	रामपुर बुशहर	3, 651	1,11,459	किन्नौर। इस रियासत से रोहड़ू और रामपुर तहसीलें निकाल कर महासू में मिलाई गई, शेष ज़िला किन्नौर बना।
2.	कुमारसेन	84	13,983	महासू
3.	ढेलठ	8	1,673	
4.	ढाढी	7	282	
5.	संगरी	21	3,839	
6.	खनेटी	21	3,171	
7.	दरकोटी	5	632	
8.	जुब्बल	214	28,538	
9.	रावींगढ़	16	982	
10.	थरोच	70	5,363	
11.	बलसन	57	6,639	
12.	घूण्ड	9	1,959	
13.	रतेश	2	542	
14.	ठयोग	31	7,307	
15.	मधान	23	4,403	
16.	कोटी	44	9,721	
17.	क्योंथल	186	27,713	
18.	भज्जी	94	16, 474	
19.	धामी	28	5,114	
20.	कुनिहार	7	2,391	
21.	अर्की (बाघल)	120	26,529	
22.	सोलन (बघाट)	33	11,022	
23.	महलोग	49	8,631	
24.	मांगल	14	1,325	
25.	कुठार	21	4,970	
26.	बेजा	5	1,058	

इन्हीं अनेक छोटी रियास्तों को बाद में हिमाचल सरकार ने सब-डिविजन एवं तहसीलों का रूप दिया। जिनमें रामपुर, रोहड़, जुब्बल, चौपाल, कोटखाई, कुमारसेन, ठियोग, सुनी, कुसुम्पटी, सोलन, नालागढ़ तथा अरकी के नाम लिए गये। इसी जिला को बाद में पहली सितम्बर, 1972 से ज़िला शिमला और सोलन का रूप दिया गया। पुनर्गठित महासू जिला को शिमला का नाम दिया गया जिस में रामपुर, रोहड़ू, जुब्बल, ठियोग, चौपाल, कुसुम्पटी तहसीलें तथा सूनी, कोटखाई और कुमारसेन सब-तहसीलें और शिमला सबडिविजन सम्मिलित किये गये। इसी प्रकार ज़िला सोलन में महासुई के जो क्षेत्र सम्मिलित हुए वह हैं—कंडाघाट, सबडिविजन अर्की, नालागढ़ और सोलन तहसीलें। इन सब में प्रधानतया महासुई, उपभाषा बोली जाती है। यह महासुई क्षेत्र कुलवी, मंडियाळी, सिरमौरी से घिरा हुआ है। शिमला का क्षेत्र 5000 वर्ग कि० मीटर है और इसकी जनसंख्या 4,19,844 है जो 1981 तक 6 लाख तक हो जायेगी। इसी प्रकार 1 लाख से भी अधिक ज़िला सोलन की जनसंख्या भी महासुई बोलने वालों की है।

शिक्षा, आवागमन, वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास के फलस्वरूप महासुई को एकता के सूत्र में पिरोने का सुअवसर मिला है, जिस से महासुई भाषा क्षेत्र को एक व्यक्तित्व मिल गया है, जो पहाड़ी संस्कृति एवं साहित्य के विकास का द्योतक है।

—कुमार भवन संजौली, शिमला।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

—गोवर्धन सिंह

महासू खंड जो अब जिला शिमला के नाम से प्रसिद्ध है, न केवल भौगोलिक, अपितु सामाजिक व ऐतिहासिक दृष्टि से हमेशा से पृथक इकाई रहा है। महासूई क्षेत्र गिरिराज हिमालय की तलहटी में फैला हुआ है। इस के उत्तर में सतलुज नदी के उस पार देव भूमि कुल्लू, उत्तर पूर्व में किन्नौरों का किन्नर देश, दक्षिण पूर्व में गंगा की घाटी गढ़वाल, दक्षिण में सिरमौर और हरियाणा और पश्चिम में गोविन्द सागर और मण्डी हैं। विशाल पर्वतमालाओं, ऊंची-नीची घाटियों, चीड़ देवदार और रई के विशाल वन-खण्डों और सेब के उद्यानों के इस प्रदेश को पब्बर, गिरिगंगा, शालवी और सतलुज नदियां सदा सींचती रहती हैं। पहली तीन नदियां तो पूर्व की ओर बहती हैं और बंगाल की खाड़ी के पास सागर में मिलती हैं परन्तु सतलुज पश्चिम की ओर बह कर अरब सागर में मिलती है। नदी प्रवाह में यह विभिन्नता इसी क्षेत्र में पाई जाती है।

संभव है प्रागैतिहासिक काल में यह भूखंड घने जंगलों, जंगली जानवरों आदि-मानव और तपस्वियों की विचरण-स्थली भी रहा हो, जिसका प्रमाण यहां की असंख्य प्राकृतिक गुफाएं, चित्ताकर्षक वनस्थली, झरनों, नदियों, अनेक जलस्रोतों, झीलों इत्यादि की बहुलता, स्वास्थ्यप्रद जलवायु इत्यादि है। इस क्षेत्र की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर सही मूल्यांकन करना या घटनाओं का क्रमिक विवरण प्रस्तुत करना आसान नहीं है, फिर भी अनेक भारतीय व विदेशी विद्वानों ने इस क्षेत्र के नर-नारियों की शारीरिक बनावट पर विभिन्न जातियों के प्रभाव के आधार पर तथा विभिन्न, रीति-रिवाजों, लोक-कथाओं एवं लोक गीतों की परम्परा, भाषा विज्ञान की दृष्टि से स्थानीय बोली की पृष्ठभूमि, लोक कला तथा स्थापत्य कला के रूपों के अध्ययन के माध्यम से महासू के सांस्कृतिक इतिहास में झांकने का प्रयास किया है।

यह तथ्य तो निर्विवाद ही प्रतीत होता है कि प्रागैतिहासिक काल से ही महासू खण्ड भिन्न-भिन्न सामाजिक एवं आर्थिक पृष्ठभूमि रखने वाली जातियों एवं उपजातियों का संगम-स्थल रहा और कालान्तर में भौगोलिक एकता तथा एक सी आर्थिक जीवन-पद्धति के फलस्वरूप लगभग समान संश्लेषित सामाजिक इकाई इस अंचल में उभर आई। जिसके कुछ प्रमाण यहां की लोक परम्पराओं और लोकगीतों में यत्र तत्र उपलब्ध होते हैं। इस क्षेत्र की सब से पुरानी जातियों में यक्ष, किन्नर-किरात, नाग, दस्यु, पावो, खश और कोल आदि जातियों का उल्लेख किया जाता है, परन्तु इन जातियां के प्रभाव के अधिक प्रमाण नहीं मिलते। कुछ विद्वानों के अनुसार वर्तमान कोली, चनाल, डोम जातियों के पूर्वज किन्नर-किरात, नाग, दास-दस्यु थे परन्तु अधिक शक्तिशाली जातियों के सामने वे अपना अस्तित्व खो बैठे और कालांतर में पतन की स्थिति में पहुंच गये।

एक मत है कि खश जाति जो मध्य एशिया से आई थी पामीर, काश्मीर, हिमाचल प्रदेश, गढ़वाल और कुमाऊं सहित सारे हिमालय के क्षेत्र में फैल गई। ऐसा प्रतीत होता है कि यह जाति इतनी शक्तिशाली थी कि इस ने पहले से बसी हुई सभी जातियों पर विजय प्राप्त करके हिमालय के विभिन्न क्षेत्रों में अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। खश जाति के आक्रमण का समय यद्यपि विवादास्पद है, फिर भी यह धारणा संगीत प्रतीत होती है कि वह वेदकालीन युग से पूर्व आई थी क्योंकि उस के बहुत से रीति-रिवाज एवं पारिवारिक नियम वैदिक विचार धारा से भिन्न हैं। यह जाति आज भी महासू क्षेत्र की आबादी का विशाल अंग है।

यह तो वास्तविकता ही है कि ईसा की छटी सातवीं शताब्दी से ले कर पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश आदि भारतीय मैदानों से बहुत से लोग महासुई क्षेत्र में आकर बस गये। ऐतिहासिक दृष्टि से जातियों और उप-जातियों के यहां आकर बसने का क्रम कुछ भी क्यों न रहा हो परन्तु यह निर्विवाद है कि इस क्षेत्र की सांस्कृतिक परम्परा का जन्म विभिन्न संस्कृतियों के समागम के परिणाम-स्वरूप ही हुआ, यद्यपि आज उनमें बहुत हद तक एकरूपता आ गई है।

यह भूखण्ड देव भूमि के नाम से प्रख्यात रहा है। वास्तव में यहां पर गांव गांव, घाटी घाटी में किसी न किसी देवी या देवता का मन्दिर बना हुआ है। लोगों का इन ग्राम देवताओं पर अटूट विश्वास है। लोग देवता को पालकी में उठा कर मेले त्यौहारों में भी ले जाते हैं और उसके साथ नाचते और गाते हैं। देवता बीमारी, न्याय, युद्ध, चोरी वगैरह सब चीजों का फैसला भी देता है। गांव का सारा समाज उसके इर्द गिर्द घूमता है।

लोक कथाएं जो लोगों की आशाओं आकांक्षाओं को प्रतिबिम्बित करती हैं, लोक-गीत और लोक-नृत्य जो लोक-जीवन की स्वाभाविक अभिव्यक्ति के रूप में उभरते हैं, किसी भी समाज की वास्तविक सांस्कृतिक परम्परा को सामने रख देते हैं। लोक कथायें, लोक गाथाएें, लोक गीत, लोक नृत्य और धार्मिक परम्पराएं यहां की स्मृद्ध सांस्कृतिक परम्पराओं की द्योतक हैं।

महासूई लोक-कथाओं और लोक गाथाओं में उल्लेखनीय है भर्तृहरि, सघराटा, आस्प-हिन्दूआणा, हरि-हिन्दुआणा, कणदेवता, श्री राम, कृष्ण अन्य तथा देवी देवता आदि-आदि प्रसिद्ध लोक साहित्य के अमूल्य रत्न हैं। इसके अतिरिक्त ऐसी भी असंख्य लोक कथाएं है जिन से हमें इस अंचल के इतिहास का प्रचुर आभास मिलता है।

महासुई जन-जीवन में लोक नृत्य एक विशेष स्थान रखते हैं और इस अंचल के सरल लोग मुक्त होकर खंजरी या ढोलक की थाप पर थिरक उठते हैं। अपने दिन-प्रति दिन के कठिन जीवन को भुला देने के लिये तो लगता है कि कुछ क्षणों के लिये वे सचमुच भूल जाते हैं कि वे कठिन, अभावग्रस्त विषमताओं से भरे जीवन का सामना कर रहे हैं।

लोक गीत भी यहां के लोगों के प्राण हैं। मेला त्यौहार हो, या खेत खलियान हो, स्त्री या पुरुष, बच्चा हो, या बूढ़ा, लोक गीत सभी अवसरों और सभी लोगों के लिये मनोरंजन का एक मुख्य साधन हैं। लोक गीतो में लामण, झूरी, साका मुख्य गीत हैं जिन्हें सभी बड़े चाव से गाते हैं।

—सिविल सचिवालय, शिमला-171002।

धार्मिक संदर्भ

—कलावती बसटा

यदि कहा जाए कि महासुई जीवन धर्म की सुदृढ़ नींव पर ढला है, तो कोई अत्युक्ति न होगी। धर्म उनके जीवन का बल और मूलाधार है। धर्म लोक जीवन में पृष्ठभूमि का काम देता है। महासुई लोक गीत, लोक गाथा, देव कथाएं, लोक कथा और लोगों के दैनिक आचरण सभी में धर्म का कोई न कोई तत्व हमेशा रहता है। बात बात में ग्रामीण लोग भाग्यवाद और कर्मवाद की दुहाई देते हैं। जगत में, देश में, हमारे चारों ओर जो बुराइयां हैं, विशेषताएं हैं उनका मूल कारण कर्मों का फल ही बतलाया जाता है।

इस क्षेत्र में मुख्यतः हिन्दू धर्मावलम्बी लोग बसते हैं। अन्य धर्म अवलम्बियों में बौद्ध, ईसाई और मुस्लिम गिने जा सकते हैं जिनकी जनसंख्या इस क्षेत्र की कुल आबादी का एक प्रतिशत से भी कम है।

हिन्दू मतावलम्बी चार जातियों में विभक्त हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और अनुसूचित जाति। जातपात की भावना देश के अन्य क्षेत्रों की तरह विद्यमान है, फिर भी वैश्य जाति के लोग बहुत कम हैं।

जनसाधारण अनेक प्राचीन रूढ़ियों, परम्पराओं तथा विश्वासों पर अमिट आस्था रखता है। सच तो यह है कि उनका समस्त जीवन रूढ़ियों, रीति रिवाजों और अन्धविश्वासों से घिरा हुआ है। इसी प्रकार यहां के लोकगीतों और कहावतों में सतीत्व, सदाचार, सत्य, विश्वास तथा नैतिकता के प्रति जो प्रगाढ़ दृढ़ता और श्रद्धा की झलक दिखाई पड़ती है उसकी सतत प्रेरणा धर्म से ही मिलती है। धर्म को कुछ हद तक उन्होंने स्थानीय आवश्यकता एवं परिस्थितियों के अनुकूल ढालने का प्रयत्न भी किया किन्तु मूलतः राष्ट्रीय धर्म की गहरी छाप है।

भिन्न हिन्दू जातियां ब्याह-शादियां और दूसरे रीति रिवाज धर्म पर आधारित होते हुए भी बहुत भेद रखती हैं। बल्कि कह सकते हैं कि कुछ पुराने रीति रिवाज अब भी पाये जाते हैं, जिन्हें अन्य जगह पर, विशेषतः नगरों में छोड़ दिया गया है। हजार वर्ष पहले ब्राह्मण के लिए 'भट्ट' शब्द का प्रयोग होता था। आज कल उसी का बिगड़ा हुआ रूप भाट यहां पर व्यवहृत होता है।

इस क्षेत्र में प्रायः शैव, शक्ति, विष्णु और नाग देवी देवताओं और वीरों की पूजा होती है। यहां देवी देवता एक जीती जागती संस्था है, इसलिए उनके मन्दिरों का विशेष महत्व है। मन्दिरों के प्रबन्ध के लिए कारदार नियुक्त होते हैं, जिन्हें कहीं कहीं कारदार, कहीं मेहता और कहीं वजीर कहते हैं। वह खानदानी भी होते हैं बेखानदानी भी। मन्दिर के पास अपनी सम्पति होती है और अतिरिक्त पूजा और चढ़ावा चढ़ता है। अधिकांश मंदिरों में

कनैत भी पुजारी हो सकते हैं। सवेरे देवता की पूजा हो जाने पर भक्त लोग वहां पूजा कर सकते हैं। चेला या देवा उस आदमी को कहते हैं जिस के सिर पर देवता की शक्ति आती है, और लोग अपने दुःख सुख को उस से पूछ सकते हैं।

पूजा बलि—पूजा से ज्यादा महत्व यहां के देवी देवता के बलिदान का है, और बहुत कम ऐसे देवता हैं जो पशु बलि नहीं लेते। बलिदान में खड्डू या बकरे की बलि, राम कृष्ण को छोड़कर, सभी देवी देवताओं को दी जाती है। बकरा देवी या काली की बलि है।

खड्डू को भैरव, लौंकड़ा और नरसिंह के लिए चढ़ाया जाता है।

भैंस को छोटे लौंकड़ा और देवी को चढ़ाया जाता था परन्तु अब प्रथा समाप्त हो गई है, मुर्गी, सुअर, मछली और गिरगिट छोटी कालियों को दिये जाते हैं। फल, दूध और जौ की बालियां आम तौर से देवताओं को चढ़ाई जाती हैं। इसी प्रकार गरी का गोला और पेठे की बलि भी दी जाती है।

शांद बलि:—शांद और भूंडा बलियां इस क्षेत्र में खास महत्व रखती हैं। इस क्षेत्र के खूंद, कनैतों के कुछ गांवों में हर बारहवें साल शांद की बलि दी जाती है। जिस में सैंकड़ों बकरे मारे जाते हैं। देवी के चारों ओर पहले बकरों से परिक्रमा करवाई जाती है, फिर एक के बाद एक करके उन्हें मारा जाता है। इसी तरह प्रति वर्ष मघर महीने में टीकर मनाया जाता है जिस में गांव वाले हर घर से एक बकरा या खड्डू की देव मन्दिरों में प्रातःकाल बलि देते हैं। बलि का सिर पुजारी को दिया जाता है। कई बार किसी मनो-इच्छा की पूर्ति के लिए भी बलि दी जाती है। बलि से पहले बकरे या खड्डू पर पानी छिड़का जाता है। यदि उस से कम्पन हो जाये, तो देवता की स्वीकृति समझी जाती है, नहीं तो कोई खोट समझा जाता है।

भूंडा:—एक बड़ा सा रस्सा पहाड़ के ऊपर से नीचे तक तान दिया जाता है, जिस पर बलि दिया जाने वाला आदमी बैठकर नीचे की ओर खिसकता है, इसे भूंडा कहते हैं। भुंडा हर बारहवें साल या कम व अधिक समय में शिमला क्षेत्र के पन्द्रह स्थानों पर किया जाता था। इस के लिए प्रमुख स्थान निर्मण्ड का था, जो कि सतलुज की उपत्यका में है और जहां रामपुर से मार्ग जाता है। निर्मण्ड अब जिला कुल्लु में है। भुण्डा तथा भूण्डा शब्दों में अन्तर नहीं है।

निरत के ऊपर शाली गांव में अंतिम भुंडा, 1902 में हुआ था। यहां बेड़ा का बाल भी बांका नहीं हुआ। निर्मण्ड में 1874 के भुंडे में रस्से से बेड़ा मारा गया। पुराने जमाने में नर बलि का एक ढंग था, इसमें सन्देह नहीं, पर अब यह बलि बिल्कुल समाप्त कर दी गई है। अब मानव के स्थान पर बकरे की बलि दी जाती है।

प्रतिष्ठा:—समय समय पर देवताओं की प्रतिष्ठा की जाती है। उस समय भी बड़ा मेला लगता है। किसी मंदिर के ऊपर नई छत डाली जाती है तो यह यज्ञ बड़ी धूम धाम से किया जाता है, इस में आस-पास के देवता भी शामिल होते हैं और वैदिक रीति से देवी देवताओं की पूजा की जाती है।

भूत प्रेत:—शिमला क्षेत्र में देवी देवताओं के अतिरिक्त भूत प्रेतों को भी बहुत माना जाता है। मरने के बाद अकेले आदमी या संदिग्ध दशा में मरने वाले व्यक्ति की प्रेतात्मा को पाप (नेवा) कहते हैं। इस से

बचने के लिए लोग पाप की दरेवटी (छोटा मंदिर) बनाते हैं, जिसमें परिवार के लोग जाकर फूल चढ़ाते हैं। कुछ देवी, देवताओं और भूत प्रेतों की जातियां निम्न प्रकार हैं :–

मातृ और जलपरी :– यह बावलियों, चश्मों और नदियों के किनारे रहती है।

कालीः–यह पहाड़ों की चोटियों और ऊंचे वृक्ष पर रहती है।
बनशीराः–यह सुनसान पहाड़ों, उपत्यकाओं और पुराने मकानों में रहते हैं।
डागः–यह खेतों के साथ सम्बन्ध रखने वाला भूत है जिसको संतुष्ट न रखने पर फसल को नुकसान पहुंचता है।

जादू टोनेः–जादू टोने से लोग बहुत डरते हैं। इसको जानने वाले ज्यादातर ब्राह्मण, योगी, मोची, कोली, बाजगी, लोहार और बढ़ई लोग होते हैं। जो आदमी कभी स्नान नहीं करता और न देवताओं की पूजा करता है, बल्कि अपना समय भूत प्रेतों की पूजा में लगाता है, उसे जादू टोने वाला समझते हैं और ऐसे आदमी से लोग बहुत डरते हैं।

लोग जादू टोने से बचने के लिए जन्तर बांधते हैं। नजर लगने का भी बहुत डर रहता है। इसके लिए भी मुनियों की सेवा में लोग जाते हैं। डाग या डागिनी की नज़र लग जाने पर लोगों को बहुत तकलीफ होती है। रोहड़ू तहसील के चसराला गांव के पास एक गुफा में एक ओझा (सयाना) रहता है, जो छिपे खज़ाने को बता देता है। लेकिन सवाल पूछने से पहले एक बकरे का सिर बलि देकर गुफा के दरवाज़े पर रखना पड़ता है। फिर यह जवाब देता है। जिसका अर्थ कारदार समझाता है। यह भी याद रखने की बात है कि कितनी ही बार हिमाचल के देवताओं के चमत्कार से अंग्रेज अफसर भी प्रभावित हुए हैं।

देवी-देवता के पास सौगन्ध लेना कोई आसान काम नहीं है। यदि आदमी झूठी सौगन्ध लेता है तो उसका सर्वनाश हो जाता है। सौगन्ध लेने के कई ढंग हैं। एक तरीका यह है कि गाय की गर्दन में लाल सूत बांध दिया जाता है, थोड़ी सी जमीन को पानी छिड़क कर साफ कर दिया जाता है और वहां गाय खड़ी कर दी जाती है। सौगन्ध लेने वाला गाय की गर्दन के सूत को तोड़ देता है। दूसरा तरीका यह है कि आदमी हल के जुए को अपनी गर्दन में डाल थोड़ी सी घास अपने मुंह में डाल कर शपथ खाता है कि यदि झूठा होऊं तो मरने के बाद बैल बनूं। देवता के मंदिर की तरफ एक पत्थर फककर या मूर्ति को छू कर भी कसम ली जाती है। मंदिर के घेरे या मंदिर के खलिहान में शपथ लेने का रिवाज भी है। इसी तरह दूसरी जगहों में भी देवताओं की सौगन्ध सच झूठ की परीक्षा के लिए चरम कसौटी है। शकुन भी इसी तरह बुरे भले माने जाते हैं।

कई जगह गाय का दूध बिना देवाज्ञा के बच्चों को नहीं पिलाया जाता। इसी प्रकार देवी-देवता के सम्मुख नंगे सिर जाना, झूठ बोलना वर्जित है और जो शपथ खाई हो, वह अवश्य पूरी करनी पड़ती है, नहीं तो देवता का शाप (दोष) लगता है।

जब कोई सामूहिक या व्यक्तिगत निर्णय देवी देवता से मांगना हो, तो गांव वालों की एक सभा (खुमली) बुलाई जाती है, देवता अपनी देववाणी-देवा या माली द्वारा अपने श्रद्धालुओं पर प्रकट करता है। कभी देवता रुष्ट हो जाता है (गाछौ दा डेवना) और कुछ भी कहने से इन्कार कर देता है।

मंदिर में कोई भी अपवित्र वस्तु ले जाना वर्जित है। इसी प्रकार परिवार में बच्चा पैदा होने (सूतक-सकोड़) या मृत्यु हो जाने के (पातक-मड़छोत) 9—13 दिन तक मंदिर में जाना वर्जित है। इन का उल्लंघन करने वाला दंडित किया जाता है, मंदिर की शुद्धि बकरा या लड्डू की बलि देकर की जाती है।

महासू क्षेत्र के लोग जिन देवी-देवताओं को पूज्य समझते हैं, उन्हें तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है, एक शैवमतावलम्बी जैसे महासू या उस के बीर, बीजट, शिरगुल इत्यादि। दूसरे विष्णु-मतावलम्बी जैसे राघव, रघुनाथ, ठाकुर, और अनेक ग्राम देवता। तीसरी श्रेणी में नाग देवता या उनके रूप गिने जा सकते हैं, पर इन सब में परस्पर कोई विरोध नहीं है।

कुछ प्रमुख ग्राम देवी-देवताओं के नाम इस प्रकार हैं। अष्ठपूजी देवी (घरेच) आदिशक्ति (कबेर), हाटेश्वरी (हाटकोटी), भीमाकाली (सराहन) श्यामाकाली (शिमला), महामाया दुर्गा (क्यारी), तारादेवी (शिमला), दुर्गा (जुब्बल), कटासन (जुब्बल) (बलसन), कोटेश्वर (कुमारसेन), चतुर्मुख (कुमारसेन) बनाड, जुब्बल, देव जुण्गा (जुणगा) काली तूना (कोटखाई), देव वेन्द्रा, चम्बी, नान्दिन (कोटखाई), डूम-कठान (ठयोग), महासू नाग (ठेवग), खडानू, मरेच, मूलपडोई, नाग धूंडा विजयेश्वर देव, कलवा नाग (टिक्कर), बऊआ नाग, माहूनाग, महादेव (दलसार), लौंकडा बीर (कियारी, रोहड़ू एवं सराहन) इत्यादि असंख्य देवी देवता हैं जिनको लोग श्रद्धा और भक्ति से पूजते हैं। इन सभी देवी देवताओं की सोने, चांदी या अष्ठधातु की सुन्दर प्रतिमायें मंदिरों में स्थापित की गई हैं, जिन के साथ असंख्य अन्य छोटे देवी देवताओं की मूर्तियां भी होती हैं।

इस क्षेत्र के मंदिर प्रायः शिखरशैली में बने होते हैं और वह पांच मंजिल ऊंचे होते हैं। देवी-देवताओं की मूर्ति और उसकी पूजा शिखर की मंजिल में होती है। शेष मंजिलों में देवता का सामान रहता है। इन मंदिरों के साथ संगीत वाद्य बजाने वाले वादक भी होते हैं। लोग देवी-देवता को मेले, त्यौहारों और अन्य उत्सवों के समय पालकी में बैठाकर जलूस में ले जाते हैं, अन्य पूजा अनुष्ठानों में उन्हें बिठाते हैं।

इन में से प्रायः बड़े देवी देवता प्रति बारह वर्ष में बद्रीनाथ, केदारनाथ की यात्रा पर भी जाते हैं। इन देवी देवताओं को सभी अनुयायी ईश्वर का ही स्वरूप समझ कर पूजते हैं। पर हर एक देवी-देवताओं के साथ अनेक मिथ जुड़े रहते हैं, जो स्वाभाविक भी हैं। इनकी दैवी शक्ति पर जनता को विश्वास रहता है। बुराई पर भलाई, दुष्टता पर मानवता और झूठ पर सत्य की विजय में यह देवी देवता उनकी सहायता करते हैं।

महासुई लोगों का दैनिक जीवन इसी धार्मिक जीवन की धुरी के इर्द गिर्द घूमता है। अभी तक देवी-देवताओं के प्रति आस्था बनी हुई है पर धीरे धीरे विज्ञान, शिक्षा और टैक्नोलोजी की चकाचौंध के सामने लोगों की परम्परागत धार्मिक जीवन रेखायें बिखरती या धीमी सी पड़ती जा रही हैं। वर्तमान पीढ़ी अभी तक अपनी श्रद्धा का सम्बल इन देवी-देवताओं को बनाए हुए हैं। भविष्य की पीढ़ी का इस ओर क्या दृष्टिकोण और रुझान उभरता है, यह भविष्य के गर्भ में छिपा है फिर भी पाप और पुण्य, अच्छाई और बुराई, स्वार्थ और परमार्थ क्रूरता और दया-भाव, थोथी स्वच्छन्दता और श्रद्धा विश्वास के बीच मानव-जीवन को सुन्दरतम बनाने के लिए दीवार खींचने की आवश्यकता

रहेगी। इसकी पूर्ति धर्म से ही संभव होगी। महासुई धार्मिक जीवन में मूल्यों एवं आदर्शों के अंकुर यत्र तत्र बिखरे पड़े हैं। आवश्यकता है तो इन्हें एक माला में सुन्दर रूप से पिरोने की।

इस सत्य से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि वेदों ने आदिमानव को ऐसी प्रकृति-शक्ति की पूजा की प्ररणा दी, जैसी आध्यात्मिक भावना से भरे मानव को आवश्यक प्रतीत हुई। इस शक्ति का ज्वलंत रूप उन्हें अग्नि, वर्षा (इन्द्र), पवन (मारूत) और सूर्य में नजर आया। धीरे धीरे मानव ने इनको साकार रूप दिया और उन्हें मानवगुण से सम्पन्न किया और उन्हें प्रसन्न करने के लिए वे जानवरों और खेतों की उपज भेंट करते थे। बहुत शताब्दियों बाद उन शक्तियों की मूर्तियां निर्मित की गईं और फिर धीरे धीरे पूजा केवल उन मूर्तियों की होने लगी, जिनके वे प्रतीक थे। ज्यों ज्यों समय बढ़ता गया कर्मकाण्डी समाज में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करने लगे और उपयुक्त स्थान, समय और विधि को जटिल धर्मानुष्ठान के लिए आवश्यक समझा जाने लगा। फलत: ऐसे दक्ष कर्मकाण्डियों के सगंठन बन गये जिन में प्रवेश परिवार को छोड़कर अन्य के लिए बन्द कर दिया गया। पूजारियों का व्यवसाय पैतृक बन गया। इन पूजारियों ने अनुष्ठान और कर्मकाण्ड के धर्म ग्रन्थ संग्रह किए, जो अब ब्राह्मण के नाम से प्रसिद्ध है। अनेक ग्रन्थों में ईश्वर का दिव्य शक्ति का मानव रूप में अवतरित होने का वर्णन भी मिलता है। जिन महान पुरूषों में यह दिव्य शक्ति प्रकट हुई, साधारण मानव ने उन्हें केवल चमत्कार ही समझा, उन्हीं महात्माओं को ही बाद में देवी-देवताओं की मूर्तियों के रूप में स्थापित कर पूज्य समझा गया। यह विकास इस क्षेत्र में मूर्ति पूजा के विस्तार का समय था, जिसके प्रमाण प्रचुर मात्रा म आज तक भी सुरक्षित हैं और इसी परम्परा पर इस क्षेत्र का लोकजीवन ढला, पनपा है, विकसित हुआ है।

इस क्षेत्र का धार्मिक जीवन भारतीय धार्मिक जीवन-परम्परा के किसी तरह भी विभिन्न नहीं है। हिन्दू धर्म, शास्त्र परम्परा, नीति शास्त्र, सिद्धान्त, कर्मकाण्ड, उपासना, योग, पुराण और दर्शन सभी कुछ भारतीय हैं, जिस पर कहीं भी अन्य प्रभाव नहीं है।

—कुमार बिष्टिण संजोली,
शिमला-6)।

"ज्यों-ज्यों सभ्यता बढ़ती जाएगी, त्यों-त्यों एक ओर तो काव्य की आवश्यकता बढ़ती जाएगी और दूसरी ओर कवि कर्म कठिन होता जाएगा।"

—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल।

महासू क्षेत्र—

मेले और त्यौहार

—सी० आर० बी० ललित

महासुई क्षेत्र किसानों की धरती है और किसान की जीवनचर्या है—मेहनत। वर्ष भर मेहनत ही मेहनत चलती रहे तो जीवन शुष्क और मरुस्थल की तपती बालू बन जाए। किन्तु नहीं, किसान का जीवन मरुस्थली की तपती बालू नहीं सागरतीर की रेत है जिसे समय समय पर सागर की लहरें आकर चूम लेती हैं और अपनी पनीली चिकनाहट की मिठास से सराबोर कर लेती हैं। ये लहरें हैं—समय समय पर आने वाले तीज त्यौहार, बिशू मेले और अन्य पर्व जिन में किसान गाता है, नाचता है, जी भर कर हंस लेता है और फिर पुनः अगले पर्व तक और अधिक आत्म-विश्वास के साथ माटी से जूझने लग जाता है। मेले वर्ष भर के दुरूह सफर में पड़ाव हैं जहां किसान अपना पसीना पोंछ सकता है। आसपास की कांतिमय दृष्यावली को अपने नयनों से संजोता है। सुंदर वस्त्राभूषण धारे बाहर आंगन में निकली ग्राम बालाओं से हास्यविनोद करता है, अपनी मनपसन्द का भोजन खाता और खिलाता है, अपने सगे संबंधियों को अपने इस असीम सुख में सम्मिलित होने की दावत देता है और दो दिनों के लिए ही सही किन्तु अपने आपको पूर्ण समझता तो है। इस पूर्णता में उसे असीम तृप्ति प्राप्त होती है, तभी तो यहां वर्षभर मेलों और त्यौहारों का तांता लगा रहता है।

मेले और त्यौहार किसी भी क्षेत्र के सांस्कृतिक आधार के द्योतक होते हैं और ऐसा ही एक मेला है–महासू क्षेत्र का बिशू अर्थात बैशाखी का मेला, किन्तु यह मेला मात्र प्रथम बैशाख को ही नहीं मनाया जाता अपितु आषाढ़ तक स्थान स्थान पर इसका आयोजन किया जाता है, इतना अवश्य है कि किसी भी क्षेत्र विशेष में श्रृंखला का समारम्भ प्रथम बैशाख से ही होता है और दो दिन चलता है। तदोपरांत बारी बारी से इलाके के सभी गांवों में कुछ दिनों के अन्तराल के पश्चात बिशुओं का आयोजन होता रहता है।

किंवदंती है कि पहाड़ी क्षेत्र के किन्नर-किरात, खशों ने कौरवों एवं पांडवों के महाभारत संग्राम में भाग लिया था और जो खानदान कौरवों की ओर से लड़े वे 'शाठी' कहलाए जो पांडव सेना का अंग बने, 'पांशी' कह कर पुकारे जाने लगे। ये आज भी शाठी और पांशी की याद ताज़ा बनाए हुए हैं। इस 'भूखंड' के ये खूंद बिशू महाभारत युद्ध का ही संस्कृत रूप सा लगता है जब शाठी और पांशी खूंदों के दल मेले के मैदान में फरसों, तलवारों, धनुषबाणों एवं बन्दूकों से लस होकर एक दूसरे को ऊंचे स्वरों में ललकारते एकत्र होते हैं। प्रथानुसार यदि पांशी के गांव में मेले का आयोजन हुआ है तो उस कबीले के कुछ युवक जाकर पड़ोस के शाठी खूंद की ग्राम-देवी की पूजा के लिए प्रयुक्त होने वाले जल की बावली में झाड़ी की टहनियां फैंक देंगे, और उस शाठी कबीले की सीमा से बाहर पहुंच कर आवाज़ लगाकर उनके मुखिया को सूचित भी कर देंगे। इस का अर्थ हुआ कि उस पांशी कबीले ने इस शाठी कबीले को अपने बिशू में भाग लेने का निमंत्रण दिया है। बस फिर क्या है निर्धारित तिथि को शाठी कबीले के लोग प्रात: ही ग्राम—देवी के पास एकत्र हो जाएंगे, प्रत्येक व्यक्ति के

हाथ में फरसा, डंडा (डिंगा), तलवार (तरार) अथवा बंदूक होगी और देवी के मंदिर के प्रांगण में देवी से आशीर्वाद और 'देवा' से आशिर्वचन लेकर ग्यारह, इक्कीस अथवा इक्यावन बंदूकों की सलामी देकर यह सहस्रों व्यक्तियों का दल कूच करेगा। राह में जहां भी दल विश्राम के लिए रुकता है वहीं पर 20-30 (जितनी साथ लाए हों) बंदूकों की सलामी दी जाएगी और यह अंतिम बार मेले के मैदान में प्रवेश करने से पूर्व पुनः दी जाएगी ताकि मेजबान खूंद को मेहमान की शक्ति का अहसास हो जाए। उधर मेज़बान कबीले के लोग मैदान के एक कोने में पंक्ति बांध कर खड़े हो जाएंगे और व्यूह का निर्माण करेंगे। ढोल और नगाड़े इस क्षण रणभेरी बजा रहे होते हैं और तब नगाड़ों पर पड़ रही थाप की गति चरम सीमा तक पहुंच जायेगी और दोनों दल एक दूसरे को ललकारते–फटकारते नृत्य मुद्रा में और अधिक करीब हो जायेंगे। फरसों और तलवारों की चमक आंखें चुंधिया देती हैं। उस क्षण और ब्राह्मणों द्वारा निर्धारित बेला में ये दोनों दल एक दूसरे से टकरा जायेंगे और परम्परा के अनुसार शाठी दल को पांशी दल द्वारा निर्मित व्यूह को तोड़ कर आगे निकल जाना है जबकि पांशियों ने अपने दुर्ग को सुरक्षित रख कर शाठियों की इस योजना को विफल करना है। दोनों ओर के नगारा, करनाल व ढोल-वादक नाटी की गति को बढ़ाते बढ़ाते पसीने से तर हो जाते है, फिर खूंदों का तो कहना क्या? एक के लिए व्यूह तोड़ना प्रतिष्ठा का प्रश्न है तो दूसरे के लिए इसे सुरक्षित रखना गौरव का प्रतीक। आज से कुछ वर्षों पूर्व तक इस प्रक्रिया में मरने मारने की नौबत अक्सर आ जाती थी और सिरों को डंडों, तलवारों एवं फरसों की मार से छलनी कर दिया जाता था, औरतें, बच्चे जिधर जिसे राह मिलती दुम दबा कर भाग जाते थे। न जाने कितने ही लोकगीत बिशू के दौरान होने वाले खून खराबे की घटनाओं की याद को आज भी ताज़ा कराते हैं जिनमें से कुछ तो स्वतंत्रता के पश्चात की भी हैं। उदाहरणतः पजाइक कबीले द्वारा आयोजित रिंजट के मेले (चौपाल) में स्वतंत्रता प्राप्ति से कुछ ही वर्ष पूर्व घटी वह घटना जिस में सनाई कबीले के अनेक व्यक्तियों को जान से हाथ धोने पड़े थे। इस घटना का विवरण लोक गीत–'विशू लाणो रिजटे बाड़गा सुनाए भाईयो' में वर्णित है। एक अन्य घटना ठलोग मेला-स्थल में कुछ ही वर्ष पूर्व घटित हुई जिसे "बाबुआ जयरामा" की नाटी आगामी पीढ़ियों के लिए सुरक्षित रखे हुए है।

बात अर्थियों तक पहुंच जाए, तब तो मेहमान कबीले को वापस ही जाना होगा, अन्यथा कुछेक सिर फटे हों, बाजू तलवार की चोट से उतर गए हों या छोटी मोटी चोटेंमात्र आई हों (जो इस गुत्थम गुत्थी में आनी स्वाभाविक ही हैं). तो दोनों कबीलों के बड़े बूढ़ों की बैठक में उनका हल निकल ही आता है और मेहमान कबीला दो दिन के इस बिशू मेले में हर्ष पूर्वक भाग लेता है और मेजबान कबीला घी, सिड्डू, शराब और अन्य पकवानों से उनकी भरपूर सेवा करता है।

व्यूह-भेदन कार्यक्रम में एक न एक दल की हार होना स्वाभाविक है और विजेता दल हारे हुए खूंदों की पीठ थप थपा कर इस पारम्परिक कार्यक्रम की समाप्ति की घोषणा करता है। तत्पश्चात आरम्भ होता है 'ठोडा' अथवा 'ठठौइर' जिसमें दोनों ओर के खिलाड़ी अपनी-अपनी जोड़ियां बना लेते हैं और धनुष और लौहफलक रहित बांस के तीरों को लेकर एक दूसरे से जूझ पड़ते हैं। ठोडा नृत्य में दोनों व्यक्ति ऊन का पैंडयुक्त मोटा चूड़ीदार पायजामा पहन लेते हैं। एक व्यक्ति 15-20 गज के फासले पर खड़ा हो कर नृत्य करता करता अपनी टांगों को द्रुतगति से इधर उधर हिलाता रहता है। जिसे 'छुलना' अर्थात उछलना कहा जाता है। जब कि दूसरा व्यक्ति धनुष पर बाण साधे कान तक खींच कर उसके टखने के ऊपर एवं घुटने से नीचे के भाग पर बाण-प्रहार करता है। यह क्रम दोनों खिलाड़ी क्रमशः दोहराते रहते हैं और दर्शकों को, जिन में अधिकतर स्त्रियां व बच्चे होते हैं, अपनी नृत्य-कला, वाकपटुता (ललकारने में विभिन्न शब्दावलियां प्रयुक्त होती है) एवं शरसंधान कला का प्रदर्शन कर मन्त्रमुग्ध करते रहते हैं। इसके अतिरिक्त बिशू में भी अन्य मेलों की भांति ही झूला झूलना, नाचना, गाना, मिष्ठान सेवन करना, मिलना, जुलना आदि कार्यक्रम रहते ही हैं, मेले वाले दिन जितने भी दर्शक एवं आमंत्रित व्यक्ति होते हैं, सब 'ठीला' प्रथा के अनुसार मेज़बान इलाके के लम्बरदार द्वारा हरेक परिवार में उचित संख्या निर्धारण के पश्चात भेज दिए जाते हैं जहां उनके खाने, नहाने और सोने का प्रबंध होता है। सायं काल घी और सिड्डू खा चुकने के बाद पुनः गीत-मुंजरों की व्यवस्था रहती है जो प्रायः रात खुलने तक चले रहते हैं। दूसरे दिन निमंत्रित कबीले का दल अपने गांव वापस लौट जाता है–किन्तु दोपहर बाद तक ठोठा खेलने के बाद। बिशू में झूले का आकर्षण ग्राम बाला के लिए कितना अधिक है यह देखिए "बाजो ला बाजणा गोइरो बाणा; चाणै ले आमैं आ मिठड़ा खाणा, खेता भाटकी बिशू खै जाणा; हो खेता मज़ा करणा; पींगो दा पिंगणा क्या डरणा।"

इसी प्रकार का एक त्यौहार है—जागरा। जागरा त्यौहार देवता विशेष के प्रभाव-क्षेत्र में उस देवता के जन्म के मास में मनाया जाता है। जागरे के दौरान उस देवता का प्रतीक-चिन्ह या पालकी पूरे क्षेत्र में एक गांव से दूसरे गांव, दूसरे से तीसरे और वहां से आगे इसी प्रकार एक एक रात के लिए विश्राम करते हैं और उस रात उस गांव में बकरे कटते हैं, घी, दाल व पटांडे (तवे पर पतले अनाज को लेप कर उतारने से बनी पतली रोटी) बनाते हैं। नाच-गाना होता है और देवता की सभी मूर्तियों को पूजा में सजा कर उनका सार्वजनिक पूजन होता है (मकान के भीतर) एवं सारी रात ब्राह्मणों द्वारा उपदेश वाक्य (शब्द) तथा देवता का महात्म्य बखान किए जाते हैं। देवता की पालकी में देवता की बड़ी स्वर्ण प्रतिमा के अतिरिक्त अन्य गणों की अष्टधातु प्रतिमाएं भी साथ डाल दी जाती हैं और रेशम अथवा मलमल के बाहर सोने चांदी की झालर से पालकी को सुन्दरता पूर्वक सजाया जाता है। देव यात्रा के मार्ग से झाड़ झंखाड़ काट दिए जाते हैं तथा दूध एवं गोमूत्र का छींटा देकर पवित्र किया जाता है। पालकी से कुछ दूरी पर आगे आगे चंवर हाथ में थामें दो व्यक्ति चलते हैं जिन्हें 'गुर्जाई' कहा जाता है। पालकी को दो आदमी उठा कर चलते हैं और जब देवता प्रसन्न हो तो दो आदमियों की एक ही जोड़ी पालकी को मील डेढ़ मील तक उठाकर ले चलने के पश्चात भी थकान अनुभव नहीं करती किन्तु यदि देवता कुपित हो जाए तो आधी फर्लांग तक उठाते उठाते भी कंधे टूटने लग जाते हैं। आज के युग में भी कुछ नास्तिक युवकों ने कई बार पालकी में कंधे लगा कर दो-दो तीन-तीन दिन बिस्तर में सो कर व्यतीत किए हैं। इसके पीछे वास्तविकता क्या है, ईश्वर जाने। किन्तु इतना अवश्य है कि यदि कोई रजस्वला स्त्री देवता की पालकी के भूल से भी दर्शन कर लें तो उसकी खैर नहीं। जागरा दो प्रकार का होता है–एक तो सामूहिक जो प्रतिवर्ष अथवा तीस वर्ष निर्धारित कार्यक्रमानुसार चलता रहता है और जिसमें सारा गांव सांझी तौर पर भाग लेता है, दूसरा व्यक्तिगत, जो किसी मनौती के पूर्ण होने पर व्यक्ति विशेष द्वारा देवता के सम्मान में आयोजित किया जाता है। द्वितीय प्रकार के जागरे का आयोजन करने वाला व्यक्ति 10 से 25 वर्षों तक घी एवं अन्न जागरे के लिए बंबेज के रूप में प्रतिवर्ष अपनी बचत में से देवता के नाम पर अलग रख लेता है और कभी उसके पास जागरा देने योग्य अन्न-धन संचित हो चुका होता है तो वह देवता की आज्ञा ले कर उसे व्यक्तिगत जागरे के लिए आमंत्रित करता है तथा सैंकड़ों हज़ारों लोगों को जागरे का भोज करवाता है। जागरे अधिकतर सावन, भादों तथा असौज महीनों में ही मनाए जाते हैं।

दीपों के त्यौहार हैं–चिड़ेवली (बलदी व ढलदी) तथा दीवाली (बूढ़ी व नई)। बलदी चिड़ेवली सावन की संक्रांति को मनाई जाती है। इस दिन महासू के अनेक क्षेत्रों एवं उत्तर प्रदेश के जौनसार बाबर, उत्तरकाशी आदि में प्रत्येक घर के बरामदे में माटी का लिंग बना कर व उस पर गोल पत्थर टिका कर तेलयुक्त कायल की लकड़ी की मशालें जलाई जाती हैं, जिन्हें 'चीड़ा' कहते हैं। पूरे सावन मास में हर रात परिवार वाले धार्मिक कर्तव्य

समझ कर चीड़ा जलाते हैं। भादों की संक्रांति को ये चीड़े गिरा दिए जाते हैं और लोग गांव के प्रांगण में एकत्रित हो जाते हैं। जहां इन मशालों को हाथ में ले कर ग्राम देवता के मन्दिर की परिक्रमा की जाती है और फिर मशालों के साथ विभिन्न प्रकार के खेल खेले जाते हैं। बाद में इन मशालों की अग्नि से मैदान के मध्य एकत्रित की गई लकड़ियों के अम्बार में आग लगा दी जाती है जो सारी रात भर रोशनी व उष्णता प्रदान करती है, एकत्र हुए सब दर्शकों को। इसे अग्नि कुण्ड के चारों ओर एकत्रित लोग देखते हैं। करियाला पार्टियों द्वारा प्रस्तुत किए जा रहे स्वांग, और बीच-बीच में पूरा जन समूह माला-नृत्य में सम्मिलित हो जाता है। स्वांग सार्वजनिक जीवन से ली गई हास्यरसपूर्ण घटनाओं को बढ़ा चढ़ा कर प्रस्तुत करना मात्र ही है और स्वांगची इसमें काफी निपुण होते हैं। देखने वालों के हंसते हंसते पेट में बल पड़ जाते हैं। स्वांगों को खेल भी कहते हैं, करियाला भी।

नई दिवाली कार्तिक मास में पड़ने वाली अमावस को होती है और बूढ़ी दिवाली मार्गशीर्ष अमावस्या के दिन। दिवाली में भी चिड़ेवली की भांति ही स्वांग एवं गीतों का समा बंधा रहता है, अन्तर मात्र यह, कि दिवाली की रात को कुछ हद तक अश्लील स्वांग दिखाने एवं अश्लील गीत गाने की छूट रहती है और किसी क्षेत्र में तो यह अश्लीलता सीमा लांघ लेती है किन्तु अभद्रता का रूप धारण नहीं करती।

पौष मास की संक्रांति से प्रारम्भ होता है—भूंडा का त्योहार। एक ही दिन में हज़ारों बकरे कटते हैं और उनका मांस सुखा कर कई मास तक खाने के लिए टांग कर रख दिया जाता है। शीत के कारण वह सड़ नहीं पाता। भूंडा पारिवारिक त्योहार है जिसमें मात्र सगे सम्बन्धियों को निमंत्रित किया जाता है। एक ही परिवार में एक से लेकर चार पांच तक बकरे काटे जाते हैं। सब बकरों को देवता के नाम पर पानी डाला जाता है और जब देवता बलि को स्वीकार कर लेता है तो बकरा जोर से अपना सिर फोड़ देता है जिसके साथ ही उसका सारा शरीर कांप उठता है। इस क्रिया को 'धुणना' कहते हैं। शीतकाल में कथा कहानियां व पहेलियां सुन-सुना कर मनोरंजन चलता रहता है। इन्हीं दिनों कताई बुनाई का काम भी साथ-साथ चलता रहता है।

माघ मास में अकसर शिवरात्री पर्व आ जाता है जिसके चार पांच दिन पूर्व से ही भगवान शिव का आह्वान् करना शुरू हो जाता है। शिव की स्तुति में गीत गाए जाते हैं। कथा-वार्ताऐं होती है और मंडप की तैयारी शुरू हो जाती है। सुनारों के घरों पर बने शिवरात्री के मंडप तो देखते ही बनते हैं। वास्तव में शिवरात्री का त्यौहार उल्लास ले कर आता है क्योंकि यह आने वाले बसन्त का सूचक होता है और साथ ही महासू निवासियों के इष्ट देव शिव का पर्व। दो तीन दिन पहले ही भक्तगण गाना शुरू कर देते हैं—

सांए आजो पार्ड़ई टीरौ जी सांए आजो पार्ड़ई टीरौ,
सूनें रं छतरो फीरो जी, सूनें रं छतरो फीरौ ।

(स्वामी शिव सामने वाली पहाड़ी पर पधार गए हैं जी, स्वामी सामने वाली पहाड़ी पर पधार गए हैं स्वर्ण छत्र घूमने लगे हैं जी, स्वर्ण छत्र घूमने लगे हैं।)

शिवरात्री के दिन स्वामी शिव के लिए घी अथवा तेल में नाना प्रकार के पकवान तल कर सजाए जाते हैं किन्तु भक्तजन उनके भूतों की सेना के लिए भी सात अनाजों को मिला कर बनाए हुए मोटे मोटे रोट बनाना भी तो नहीं भूलते। एक रोट में एक जूण (लगभग 20 किलो) या 12 पत्थे (लगभग 15 किलो) अनाज लगता है। रोट एक या तीन रहते हैं। रोटों पर आटे से बनाए बकरे और खडू भी धरे जाते हैं और शिव जी का प्रतीक हरे पाजे का चंदवा पूजा में टांग दिया जाता है।

कमरे के एक कोने में सफेद आटे और रंगों से एक सुन्दर मंडप बनाया जाता है जिसके केन्द्र में मिट्टी का शिवलिंग, पार्वती, गणेश और हनुमान की प्रतिमाएं रखी जाती हैं। पार्वती की प्रतिमा के चारों ओर घर के सभी कीमती जेवर रखे जाते हैं। सारे मंडप में आटे के बनाए खडू बकरे और एक सींग वाली राम छेली रखी जाती है। मंडप के एक किनारे पाजे की पत्तियों के सारे 3 या 5 आटे के पोने, जिनका वजन एक या दो किलो से लेकर 9 किलो तक होता है, रखे जाते हैं। इनमें एक शिव के लिए, दूसरा गणों के लिए और तीसरा स्थानीय देवी देवताओं के लिए बनाया जाता है।

चंदवा गूंथते हुए भी मंत्र कहे जाते हैं और सात गुच्छियों (कलियों) के नीचे व ऊपर एक एक पकवान रस्सी से बांध दिया जाता है। पूरी रात भजन पूजन चलता रहता है और दूसरी सुबह मंडप पर बनी शिव, पार्वती एवं गणेश आदि की आकृतियों में प्रयुक्त आटा एवं अन्य सामग्री को आस पास ही कहीं पवित्र से स्थान पर मिट्टी में गढ़ा खोद कर दबा दिया जाता है और पाजा (चैरी) के चंदवे को बरामदे के एक कोने में टांग दिया जाता है, जो पूरा वर्ष शिव के प्रतीक के रूप में वहां झूलता रहता है।

शिव आमिष-भोजी देव है अतः अनेकों स्थानों पर शिव के लिए बकरे अथवा खडू की बलि दी जाती है। इस अवसर पर शिव-स्तुति में जो भजन गाये जाते हैं उनमें से एक में भक्त पूछता है:—

ईशरा महादेवा का खाणो तेरे ?
खाडू री डलकी आंजो रं फेरं ।

(ईश्वर महादेव क्या खाओगे तुम? खडू का मांस अथवा आंतों का कुंडल?)।

शिवरात्री का पर्व महासुई क्षेत्र में पारिवारिक पर्व के रूप में मनाया जाता है, सार्वजनिक रूप से नहीं। जैसा कि मंडी में शिवरात्री का मेला, जिसमें दूर दूर के लोग आकर सम्मिलित होते हैं।

उपरोक्त त्यौहारों के अतिरिक्त लवी का मेला भी अपना विशेष महत्व रखता है, एक व्यापारिक मेले के रूप में। यह हिन्दोस्तान-तिब्बत सड़क पर स्थित रामपुर बुशहर में प्रति वर्ष नवम्बर मास में आयोजित किया जाता है। कहते हैं इस मेले का इतिहास लगभग 300 वर्ष पुराना है, जब बुशहर नरेश केहर सिंह के शासनकाल में बुशहर एवं तिब्बत के मध्य व्यापारिक सन्धि हुई थी। तब से अब तक नियमित रूप से लवी का मेला मनाया जा रहा है, हालांकि तिब्बत पर चीनीयों के अधिकार के बाद यह मेला अपना अन्तराष्ट्रीय स्वरूप खो बैठा है।

लवी का मेला ऊन, पशम, गलीचे, भेड़, बकरियां, घोड़े इत्यादि के व्यापार के लिए प्रसिद्ध है। दो विभिन्न संस्कृतियों के लोग जो एक दूसरे की भाषा किंचितमात्र भी नहीं जानते थे, पुराने समय में शायद संकेत से वस्तुओं का व्यापार विनिमय करते रहे होंगे। आज भी चोगे की खुली बाहों के परदे में घोड़े के स्वामी का अंगूठा पकड़ने से वह समझ लेता है कि घोड़े की कीमत ग्राहक 1000 रुपया देना चाहता है जब कि उंगली का पकड़ा जाना 100 रुपये का द्योतक है। संकेत की भाषा शब्दों से अधिक शक्तिशाली है और शायद अधिक प्राचीन भी।

इनके अतिरिक्त कुछ अन्य विशिष्ट मेले भी हैं। हलोग (तहसील शिमला) का 'पत्थर का खेल' जिसमें दो दल एक दूसरे पर पत्थरों से प्रहार करते रहते हैं, जब तक कि किसी व्यक्ति के रक्त स्रावन न होने लगे

और उसके रक्त से काली मां की मूर्ति को तिलक न दिया जाये। यह मेला प्रति वर्ष दिवाली के दूसरे दिन मनाया जाता है। कहते हैं पहले काली को मनुष्य की बलि दी जाती थी। ग्राम भटेवड़ी (तहसील चौपाल) में एक खेल होता है "खिला"। प्रति वर्ष दिवाली के तीसरे दिन निर्धारित स्थान पर दो दल जिनमें एक ब्राह्मणों का (भटेवड़ी) एवं दूसरा क्षत्रियों का (शंठा) एकत्र होते हैं और मंत्रोचारण के साथ प्रातः मिट्टी में गाड़े गये लकड़ी के डंडे को मिट्टी में से खींच कर आकाश में उछालने के लिए निर्धारित समय पर उस पर लपक पड़ते हैं। प्रत्येक युवक चाहता है कि वह ही डंडे को आकाश में उछाले, अतः वह दूसरों के प्रयास में अवरोध उत्पन्न करता है। लोगों का यह झुण्ड झाड़ियों, पत्थरों और खेतों में पलटे खाता पहाड़ी की ढलान में गेंद की तरह लुढ़कता है, किसी की टांग में मोच आ जाती है तो किसी की बाजू में, तो कोई सांस न ले पाने के कारण मूर्छित हो जाता है, परन्तु जब तक हिम्मत है, प्रत्येक नौजवान अपना हाथ डंडे की ओर बढ़ाता रहता है और दूसरे को झुण्ड के बाहर धकेलता-कुचलता भीतरी भाग की ओर जाने का प्रयत्न करता है।

इतना ही विचित्र है 'मौण का मेला' जिसमें स्थानीय जड़ी-बूटियों के विष से नदी के किसी बड़े तालाब में मछलियों को मारने का कार्यक्रम रहता था। निर्धारित तिथि को अनेकों दल विष का चूर्ण साथ ले कर तालाब के किनारे तक अश्लील गीत गाते अपनी टोली के आगे गांव के कोली को पूर्ण नग्नावस्था में नचाते-नचाते पहुंच कर विष को पानी में फेंक देते जिसके फल स्वरूप मछलियां मर कर ऊपर तैरने लगती और फिर उन्हें पकड़ा जाता। प्रत्येक दल प्रयत्न करता कि वह पहले पहुंच कर अधिक मछलियां मारे और यदि दूसरा दल उससे पहले पहुंचा होता तो कई बार नौबत डण्डों-फरसों तक आ जाती। क्योंकि इस प्रक्रिया में बहुत सारी मछलियां पानी में बह जाती हैं और कितना ही विष पानी में बह कर आगे के क्षेत्रों की जलसम्पदा को हानि पहुंचाता। मौण जो अनेकों क्षेत्रों में मनाया जाता था अब सरकार द्वारा लगाए प्रतिबन्धों के कारण बन्द कर दिया गया है।

सावन की साजी (संक्रांति) को भैंसे के दर्शन किए जाएं तो शुभ होता है, इस विश्वास को लेकर भैंसों एवं बैलों को नहलाया जाता है, ग्वालों को घी अथवा तेल में पके-पकवान खिलाए जाते हैं। अनेकों अन्य स्थानों की भांति सैर मेले (तहसील अर्की) में भी इस अवसर पर भैंसों की लड़ाई का कार्यक्रम आयोजित किया जाता है साथ ही कुश्ती का भी। सावन की साजी को अनेक स्थानों पर रिहाली (हरियाली) मेले भी मनाए जाते हैं जिनमें स्थानीय देवताओं की पूजा की जाती है और सम्बन्धियों को प्रीति-भोज पर आमन्त्रित किया जाता है।

महासुई क्षेत्र अर्थात् जिला शिमला एवं सोलन में प्रति वर्ष इतने अधिक मेले व त्योहार मनाए जाते हैं कि स्थानाभाव के कारण कुछ प्रमुख का ही उल्लेख हो पाया है। इनके अतिरिक्त अन्य प्रमुख मेले हैं तहसील रामपुर के फाग एवं दुत्रवाहली, तहसील रोहड़ू के रोहड़ू जातर एवं अढ़ाल का मेला, तहसील कुमारसेन के कांगल एवं नारकंडा के मेले, तहसील जुब्बल के हाटकोटी, दुशहरा एवं रामपुरी की जाटर, तहसील कोटखाई के शवाल तथा पुड़का के विशू, तहसील चौपाल में दभास (सरांह) तथा ठलोग के बिशू, तहसील सोनी का पंजेली का मेला और पंघोड़ की रिहाली, तहसील शिमला में सिप्पी का मेला व गुम्पा में दुशहरा, तहसील सोलन में सोलन व कोटी के मेले, तहसील ठियोग में घूंड और क्योंग के विशू, शिमला में जाखू का बैशाखी मेला, तहसील कण्डाघाट में करौल का मेला तथा अमौखी डाली का मेला।

—हार्उसिंग बोर्ड, शिमला।

शिमला क्षेत्र के

विवाह गीत

—जगदीश शर्मा

हिमाचल प्रदेश अतीत से ही कला संस्कृति का विस्तृत प्रांगण रहा है। जहां एक ओर यह क्षेत्र मूर्तिकला, साहित्य की दृष्टि से सम्पन्न है वहां दूसरी ओर नृत्य व लोकगीतों के अतिरिक्त यहां मेलों, उत्सवों व त्यौहारों में विशेष पारम्परिक गीत गाने का रिवाज है।

लोकगीतों में सामाजिक आचार-विचार व रीति-रिवाजों के गीतों का अपना विशेष महत्व है। हिन्दू समाज के प्रति एक कहावत है 'यहां व्यक्ति का जन्म ब्राह्मणों-विद्वानों के ग्रह-खोजक मन्त्रों के साथ होता है, और मरना भी ब्राह्मणों की आहुतियों दान व मूल मन्त्रों के उच्चारण के साथ'। निःसन्देह हर सामाजिक व धार्मिक कृत्य के अपने अपने गीत होते हैं जैसे जन्म के समय गाये जाने वाले गीत, मुण्डन, संस्कार गीत, यज्ञोपवीत गीत एवं मृत्यु के समय गाये जाने वाले गेय मन्त्र अथवा गीत। इन सब के अतिरिक्त विवाह-गीत भी इस क्षेत्र की झिलमिलाती संस्कृति का अनूठा उदाहरण हैं।

जिला शिमला में विवाह की तीन पद्धतियां या प्रथाएं हैं। विवाह, जाजड़ा व हार प्रथा। हार प्रथा जिला शिमला के पिछड़े क्षत्रों में थी अब वह समाप्त हो चुकी है। जाजड़ा सर्वसाधारण व सर्वानुकूल प्रथा है। इसके अनुसार गांव के लोग लड़की के साथ वर के घर जाते हैं। जहां उन्हें प्रथा वश सीड़कू, घी या सीठा तथा घी व शिकार खिलाया जाता है। ब्याह की प्रथा उच्च घरों में है जो पूर्णतः विवाह-रीति है।

जहां तक ब्याह-गीतों का प्रश्न है, जाजड़े व ब्याह में वे पूर्णतया गाये जाते हैं। मंगलाचरण के अतिरिक्त विवाह-गीत पूर्णतः लोक रचनाएं है। मंगलाचरण, तुलसीदासकृत रचना का ही रूप है। जो कुछ भिन्न रूप व अलग अलग अन्दाज व लय में गाया जाता है। विवाह-गीतों में मण्डल बनाने, पत्री लाते, वस्त्र पहनके, मेहमान आत समय, यज्ञोपवीत के समय, तेल चढ़ाने के समय, मेंहदी के समय, देहरी पूजन के समय फेरे लगाते समय, अर्थात् विभिन्न अवस्थाओं-गतिविधियों के गीत हैं। इन गीतों का गायन मुख्यतः लड़कियों या स्त्रियों की टोलियों द्वारा किया जाता है। यहां तक कि कुछ क्षेत्रों की टोलियां तो गीत-गान के लिए दूर दूर तक बुलाई जाती हैं।

विवाह मंडप के लोक-गीतों का एक उदाहरण:—मण्डप बनाने के शुभ अवसर पर गायन मण्डली (जिसमें प्रायः लड़कियां होती हैं) समीप बैठ कर गायन का शुभारम्भ करती हैं। जो जो सामग्री पण्डित मण्डल में भरते हैं वही गायन रूप में सामने आती है।.....केले के खम्भे, हरे-पीले चावल, मेवा-मौली, दूर्वा पीला रंग, चार पाट आदि सामग्री मण्डल बनाने में काम आती है.....।

पूछ लाओ, कूलौ रे परोहतौ	कुल पुरोहित पूछते हैं –
केया लाणी बेदी रा संजोगी।	बेदी में क्या-क्या लगता है ?
कलव रे खाम्बे	केले के खम्बे

वेदी ए लागौ,
सैई हुन्दौ वेदी रा संजोगौ ।
पूछे लाग्रो कूलौ रे परोइतौ
केश्रा लागौ वेदी रा संजोगौ।
हरे पीउले चाउलौ रंगाउणे
सै ई हुन्दो वेदी रो संजोगौ ।
पूछे लाग्रो कूलौ रे परौइतौ।
केश्रा लागौ वेदी रे संजोगौ ।
पीउला बठाउवा वेदी ए लागौ
सै ई हुन्दौ वेदी रो संजोगौ ।
पूछे लाग्रो ......संजोगौ ।
ला पीउली ए
चांदणी मंगाउणी
सै ई हुन्दौ वेदी रो संजोगौ ।
पूछे लेग्रो कूलौ रे परोइतौ
केश्रा लागौ वेदी रा संजोगौ
मेवा, मौलीए, वेदीए लागौ
सै ई हुन्दौ वेदी रो संजोगौ ।
पूछे लेग्रो कूलौ रे परोइतो
केश्रा हुन्दौ वेदी रो संजोगौ ।
हरी हरी दरूबई
वेदीए री लागौ ।
सै ई हुन्दौ वेदी रो संजोगौ ।
पूछे लेग्रो कूलौ रे परोइतौ....संजोगौ
चारै पारू वेदीए लागौ
सै ई हुन्दौ वेदी रो संजोगौ।
पूछे लाग्रो ....वेदी रो संजोगौ ।
कोणे वहो देवे धारी ग्राए दरूवौ
पीउले बठाग्रो कुणी देवे धारीए दरूबो
शिवजी ए राणी धारी ग्राए
पीउलै बणाग्रो
पारवती धारी ए वरोगो ।
कुणे देवे धारी दरूवौ ।
रामो देवे धारी ग्राए
पीउलै बठाग्रो
सीए राणी धा ए दरूवै ।
कुणी देव धारी ग्राए दरूवौ
पीउलै बठावै
कुणी देग्रो धारीए दरूवौ

वेदी में लगते है ।
वही वेदी का संजोग है ।
कुल के पुरोहित पूछते हैं—
वेदी की सामग्री क्या है—
हरे-पीले रंगदार चावल,
वही वेदी की सामग्री है ।
कुल के पुरोहित पूछते हैं—
वेदी में क्या क्या लगता है ?
केलों का पीला रंग
वेदी का संजोग है ।
कुल पुरोहित पूछते हैं—
लाल पीली चांदणी मगाग्रो

वही वेदी का संयोजक है ।
कुल पुरोहित पूछते हैं--
पूजन में क्या लगता है ?
दाख, गरी, डोरी, ही
वेदी की सामग्री है ।
कुल पुरोहित पूछते हैं—
वेदी की क्या सामग्री है
हरी हरी जूब (घास)
वेदी में लगती है
वही वेदी की सामग्री है ।
कुल पुरोहित ....है
चार मिट्टी के बर्तन
वेदी की सामग्री है ।
कुल पुरोहित ...है ।
कौन देव वेश धार ग्राए
पीले रंग में देव का वास है
शिवजी ने रानी ब्याही ।
पीले डोले में पारवती ने

कौन देव ....वेश धारण किए ग्राए
राम देव वेश धर ग्राए
पीले बठाव में
सीता राणी वेश धर ग्राई ।
किस देव ने वेश रूप धारा....
पीले रंग में ...
किस देव ने रूप धारण किया.....

कृष्ण जी धारी ए ग्राए
पीउलै बठावो
रुक्मणी धारी ए वरोवो ।

कृष्ण भगवान वेश में ग्राए
पीले रंग में
रुक्मणी ने वेश किया

इसी प्रकार शिव, लक्ष्मी, ब्रह्मा शारदा का नाम जोड़ कर गान किया जाता है।

जनेऊ डालते समय

यज्ञोपवीत की प्रथा सामान्यतः ब्राह्मण परिवारों में है। जनेऊ डालने के बाद व्यक्ति देवी-देवताओं की पूजा या अन्य शुद्ध कर्मिक कार्य में भाग लेने योग्य हो जाता है। इस समय धारण किया गया गुरु जीवन भर का गुरु होता है। वर गेरूग्रा वस्त्र धारण किए बगल में मृगछाल दबाए हाथ में लाठी, कमण्डलु थामे पूरे संन्यासी के वेश में होता है। यह ऐसा दुःखद समय होता है जब पुत्र समस्त परिवार के सम्बन्ध से उऋण होकर ग्रपने जीवन का ठेला ग्रपने भार पर चलाने के लिए निकल पड़ता है। मां बाप, भाई, बहिन ग्रांखों के नीर लिए संन्यासी पुत्र की झोली में भीख डालते हैं। ग्रन्त में गुरु दक्षिणा के लिए वह घर के चारों ग्रोर चक्कर लगाता है –

बालै कृष्णे जोगौ वे लोवै
ए जोगे कृष्णे कुणीए धारै
बालै कृष्णे जोगौ वे लावे
ए जोगौ लौवी कृष्णो गुरुए धारै
बाले कृष्णे भगुए वे लोवे
ए भगुए कृष्णे गुरूए धारे
बालै कृष्णे धागे वे लावै
ए धागा कृष्णा कुणीए धारे ।
एकी हाथे झोले फाउडे
दूज्जे हाथे टोर
बडू चालौ कांशी पुरी ले
ग्रामीया लाग्रो रोए ।
रोए न रोए बडूरी ग्रामेया
बडू ग्राग्रो पण्डतो ।
नोखौ जोगटू ग्राग्रो हरी कृष्ण
बिछ्या देग्रो मोरी माई
बिछ्या मांगी न जाणो हरी कृष्ण
नौखौ जोगटू ग्राग्रो हरी कृष्ण
बिछ्या देग्रो बाबू हरी कृष्णा
बिछ्या मांगी न जाणी हरी कृष्णा

बालक कृष्ण के जोगी रूप ने मोह लिया
जोगी कृष्ण ने क्या रूप धारण किया?
बालक कृष्ण के जोगी रूप ने मोह लिया
कृष्ण ने गुरू धारण किया
कृष्ण ने भगुए वस्त्र पहने
भगुए वस्त्र गुरू ने कृष्ण को पहनाए
कृष्ण ने चोगे को धारा
कृष्ण को जनेऊ किसने पहनाया ?
एक हाथ में झोली
दूसरे में लाठी लिए
पुत्र कांशीपुर को चल पड़ा
मां रोने लगी ।
मां, मत रो
पुत्र तो पण्डित हो चला ।
हरी कृष्ण ग्रनोखा जोगी बना
मां मुझे भिक्षा दो
हरी कृष्ण भिक्षा न मांगो
हरी कृष्ण ग्रनोखा जोगी हो ग्राया ।
बापू कृष्ण को भिक्षा दो
कृष्ण भिक्षा मांगी नहीं जा सकती

तेल बटना लगाते समयः—तेल बटणा तेल, हल्दी, नमक का एक मिला जुला मिश्रण या लेप है जो वर को मला जाता है। इस का प्रारम्भ वर की राशि से मिलती जुलती पांच या सात भाभियां करती हैं। यह तीन चरणों में मला जाता है तथा बीच में तीन बार स्नान कराया जाता है । तेल बटणा मलने वाली भाभियां

हास परिहास, छेड़ छाड़ के साथ यह मंगल-कार्य करती हैं। इस के उपरान्त पहले मां बाप, भाई बहिन (परिवार के सदस्य) फिर शेष सम्बन्धी यह क्रिया करते हैं। जैसे सम्बन्धी या अन्य सदस्य तेल मलते हैं, गीत की पंक्तियां उनके अनुरूप गाई जाती है —

× × ×

तेलो लाए तेलीया
तेलो कुणिए संजोए ।
तेलो लाए तेलीया
तेलो मामुए संजोए ।
जुगं जीवै मामे तेरे
जिने तेरे तेलो संजोए ।
तेलो लाए तेलीए
तेलो कुणी संजोए
तेलो लाए तेलीए
तेलो मामीए संजोए ।
मामीए सुहागणे तेले मामीए संजोए
तेलो लाए...... संजोए,
तेलो लाए तेलीया,
तेलो बाबूए संजोए,
जुगं जीवो बाबू तेरे
जीने तेलो संजोए ।
तेलो .... संजोए,
तेलो लाए तेलीए,
तेलो मामीए संजोए
मामा सुहागणे
तेलो मामीए संजोए ।
बाएवा कटोरा बोटणे दा (लय परिवर्तन)
बाएवा मलीदिए कौए मणीए
बाएवा कटोरा बोटणे दा
बाएवा मलीदीए पांजे मणीए ।
माणे मण्ढोलड़ी गांगो रो पाणे
गांगे पाणी ए गरेते इदं शनान कराए,
माणो मढोलडी केमटू रे डोले
केमटू री डूलीए गरेते इदं शनान कराए,
माण कटोरा दूध दईरा,
कृष्ण मला-मली नलाइये ।

तेल वटणा लगाओ . . .
तेल-वटणा किस ने बनाया ?
तेल बटणा मलो. . .
तेल मामा ने लगाया
तेरे मामा जुग जीये,
जिन्हों ने तेल लगाया ।
तेल .. . . लगाओ :........
तेल बोटणा किस ने बनाया
तेल बोटणा मलो ....
तेल मामी ने बनाया,
मामी सुहागिन ने तेल बनाया मिलाया
तेल. . . . . . . मलो
तेल बोटणा लगाओ
तेल बापू ने बनाया
तेरे बापू जुग जुग जिएं
जिन्हों ने तेल बनाया
तेल . . . . . . बोटणा . . . . लगाओ ।
तेल. . . . . मलो . . . .
तेल मां ने संजोया
मां सुहागिन ने
तेल बनाया (मिलाया)
. . . . वायवा . . . . , कितनी
महिलाएं मलें . . . .
वोटणे में. . . . . — वायवा
. . . . . . बोटणा पांच . . . : औरतें मलें
गंगा का. . . . . जल भर लाओ
गंगा का जल. . . . . . . दूध के साथ स्नान कराओ ।
मटके में . . . . . जल भर लाओ . . . .
जल सहित दूध के साथ स्नान करो. . . .
दूध दही का कटोरा लाओ
कृष्ण को मल मल कर नहलाओ

मेंहदी लगाते समय:— प्राय: मेंहदी दोनों वर व वधु को लगाई जाती है। वर को भाभी या चाची जिसकी राशी अनुकूल हो मेंहदी लगाती है। यह हाथ पांव व नाखूनों में लगती है। वधु को सुहाग से पहले या बाद किसी भी समय मेंहदीं लगाई जाती है। विशेषत: वधु को लगने वाली मेंहदी सखियां विशेष चाव चित्रकारी से लगाती हैं —

मेंहदी कटोरे, नौ गज डोरे
बेटे रे हाथौ वे सजोए ।
बाबू रे आंगणे, खड़े होए आमेया
हाथे करे मेहंदी कटोरे ।
कुण सुहागणे माला गंदाए ?
कोणे भरे मेंहदे कटोरे ।
सिया सुहागणे माला गदाए
सै ई भरो मेंहदी कटोरे ।
मेंहदी कटोरे नौ गज डोरे,
बेटे रे हाथौ वे सजोए ।
बाबू रे आंगणे खड़े होए,
हाथे करे मेंहदी कटोरे ।
कुण सुहागणे माला गदाए,
कोणे भरे मेंहदे कटोरे ।
भाभी सुहागणे माला गदाए
सै ई भरो मेंहदी कटोरे ।

मेंहदी, कटोरी, नौ गज डोरी,
बेटे के हाथ में लगी है,
मां बापू के आंगन में खड़ी है
हाथ में मेंहदी से भरी कटोरी है ।
किस सुहागन ने माला बनाई ?
किस ने मेंहदी की कटोरी भरी ।
सीता सुहागन ने माला बनाई,
उसी ने मेंहदी कटोरी भरी है ।
मेंहदी कटोरी, नौ गज डोरी,
बेटे के हाथ में लगी है।
बापू के आंगन में खड़े होकर
हाथ में मेंहदी कटोरी है,
किस सुहागन ने माला बनाई,
किस ने मेंहदी भरी
भाभी सुहागन ने माला बनाई
उसी ने मेंहदी लगाई है ।
इसी प्रकार चाची, ननदों का नाम ले कर पुनरावृत्ति की जाती है ।)

वस्त्र पहनते हुए:— जब वर वेदी की तैयारी में वस्त्र एवं सेहरा लगाता है तो गायन मण्डली गीत आरम्भ करती है । सेहरा प्राय: मामा पहनाते हैं। इसके उपरान्त वर का मामा ही वर को वेदी मण्डल तक उठा कर ले जाता है, ऐसी प्रथा है।

कपड़े पहनवी बेरे, जाणा कुनणपुरी
पगड़ी पहनवी बेरे जाणा कुनणपुरी,
शीरे लाणे वी बेरे जाणा कुनणपुरी
चोगे पहनवी बेरे जाणा कुनणपुरी,
कंठी पहनवी बेरे जाणा कुनणपुरी,
सुतणु पहनवी बेरे जाणा कुनणपुरी,
कुण्डल पहनवी बेरे जाणा कुनणपुरी
खूब बणी आए, खूब बणी आए
खूब बणा लाड़ा
लाड़े री पगड़ी खूब बणी ओ.....
खूब बणी आए खूब बनी आए लाड़ा ।

कपड़े धारण कर कुन्दनपुरी जाना है
पगड़ी पहन „ „ „ „
सेहरा डाल „ „ „
चोगा „ „ „ „
माला „ „ „ „
पाजामा पहन „ „ „
कुण्डल डाल „ „ „
लाड़ा खूब सजा है
„ „ „ „ „
लाड़े की पगड़ी खूब बनी है।
लाड़ा खूब बना संवरा है

लाड़े दा शीरा खूब......।लाडे रे कुण्डल खूब....।	लाड़े का सेहरा कुण्डल खूब बने हैं।
लाड़े रा चोगा खूब......लाड़े रा साला खूब..लाड़ा	चोगा सालवा ,, ,, ,,
मथरे बजारे मामू जी आए (लय परिर्वतन)	मथुरा से मामा आए हैं
मामू जी शीरा लेआए ओ......	वह सेहरा लाए हैं।
केत्ती लाख शीरा, केत्ती लाख मोती,	कितने लाख का सेहरा कितने लाख के मोती हैं !
केसी लाख शीरे रा मोल ओ.......।	सेहरे का मोल कितने लाख है !
नौ लाख शीरा, नौ लाख मोती,	नौ लाख का सेहरा नौ लाख मोती,
छः लाख शीरे रा मोल ओ.......।	छः लाख सेहरे का मोल है।
मथरे बजारे मामू जी आए, छड़ी छोडीए ओ.....	
मथरे बजारे मालणी आई,	मथुरा बाजार से मालन आई है
मालणी शीरा ले आई ओ.....।	वह सेहरा लाई है।
खूब बेणी आए, खूब बणी आए लाड़ा	लाड़ा खूब बना संवरा है।
लाड़े रा शीरा खूब बणीया,	लाड़े का सेहरा खूब हैं
खूब बणीया लाड़ा।	लाड़ा खूब बना संवरा है
लाड़े वे कुण्डल, खूब वणी आए ओ	लाड़े के कुण्डल खूब है
खूब वणीया लाड़ा।	लाड़ा खूब बना है।
लाड़े वा चोगा खूब बणीया ओ	लाड़े का चोगा खूब बना है।
खूब बणीया लाड़ा ओ......।	लाड़ा खूब बना हैं
खूब बणिया लाड़ा .. ...।	लाड़ा भी खूब बना है।
लाड़े वा सुथणु खूब बणिया ओ	लाड़े का पाजामा खूब बना है, सुन्दर है।
खूब बणिया लाड़ा ओ।	लाड़ा भी खूब है।
हार श्रृंगार पहनी कानीया,	(लय परिवर्तन) कन्हैया हार श्रृंगार करे।
शीरे पगड़ी पहनी कानीया।	सिर पर पगड़ी पहन कर
हार श्रृंगार पहनी कानीया,	कन्हेया हार श्रृंगार में है।
काने कुण्डल पहने कानीया	कान में कुण्डल डाल कर
हार श्रृंगार पहनी कानीया,'	हार श्रृंगार कर,
गले सलाणा पहने कानीया,	गले में सालवा डार कर
हार श्रृंगार पहने कानीया,	हार श्रृंगार कर,
गले चोगा पहने कानीया।	कन्हैया चोगा पहन कर
हार श्रृंगार पहने कानीया,	हार श्रृंगार कर कन्हैया
पेटी बरदी पहने कानीया,	पेटी बरदी पहन कर
हार श्रृंगार पहने कानीया,	हार श्रृंगार कर
बाई गजरू पहने कानिया।	बाहो में गजरा डाल कर

पूजनः—विवाह गीत में इस मौके पर गाये जाने वाली पंक्तियां विशेष मृदुतान की हैं। इन में नौ ग्रहो गणेश पूजन व यज्ञ का उल्लेख भी पूजन विधिअनुसार आता है।

शना रे कलाई, प्रथम गणपती पूजीए	कलश के जल से गणेश का पूजन करो,
शोरे शोभी सुने रे माला,	सिर पर सोने की माला शोभा देती है,

पहले पूजे गणपती	पहले गणेश का पूजन करो।
करे मंगलाचार,	मंगल गान करो।
मंगलाचार खेले बानाइका,	मंगलाचरण करते हुए,
प्रथम गणपती पूजीए।	पहले गणेश का पूजन करो।
पहले पूजे नौ गरीआ,	पहले नौ ग्रहों को पूजो
करे मंगला चार,	गायन करो
मंगलाचार खेले .....पूजीए,	मंगलाचार करते ....पूजन करो।
मातु पूजे मंगलाचार	मातृ का गुणगान करो
मंगलाचार खेले ......पूजीए।	गुणगान करो..... पूजन करो
पहले पूजे केले खाम्बे,	पहले केलवे खम्वों का पूजन करो
करे मंगलाचार।	गुणगान करो
मंगलाचार खेले.....पूजीए।	गाते गाते ... पूजन करो
पहले पूजो देओ बनाइका,	देव वनाइक का पूजन करो
करे मंगलाचार,	गुणगान करो....
मंगलाचार खेले ....पूजीए।	गान .... पूजन करो......।
पूछे लेओ कुलं परोइतौ	(लय परिवर्तन)
क्या घड़ी लगणों रे होए?	कुल पुरोहित पूछते हैं .....
	लग्न की घड़ी हो आई है।
जीया घड़ीए काण्डे कौवे लागौ बौदं,	जब कौवे बोलने लगें
सै ई घड़ी लगाणो रे होए।	वही लग्न की घड़ी है।
पूछे लेओ कुलौ रे परोइतौ	कुल पुरोहित पूछते है
क्या घड़ी लगणो री होरे?	लग्न की क्या घड़ी है?
बारखी बर्षोए लगनौ	बरखी .... साल में
ने जूडदे	
थोड़ी घड़ी चेरी ए बेशौ	लग्न नहीं मिलते थोड़ी देर छाया में बैठो
क्या घड़ी ....होई	लग्न की..... है
पूछे लेओ ......होई।	कुल परोहित ..... है
ठाण्डो फिरीए पुण्पति पौणो,	ठण्डी-ठण्डी हवा चले
सै ई घड़ी लगणो री होले।	वही लग्न की घड़ी है
पूछे ....होए,	कुल पुरोहित .....है।
जागे जागे ए,	जागो जागो .....
गऊ ए माइयै	गऊ माता ......
दूधो लाए गऊचौ रं धारौ	दूध... गाऊच की धारा दे
जागे.--जागे ए	जागो जागो ......
भेणुए तारंआ	सुबह के तारो
होए आए लगणों रे बैरो।	लग्न की बेला हो आई है
जागे—जागे इ,	जागो जागो......
अष्टकुडो देवता,	अष्ट कुड़ी देवता
होए आए लगणो रे वेरो,	लग्न की बेला हो चली है

जागे जागे ए
कुलौ रे परोइतौ,
होए श्राए लगणो रे बैरो ।

जागो जागो
कुल परोहित . .
लग्न की घड़ी हो चली है ।

हवन:– एक ओर हवन में जो घी की आहुति पड़ती है दूसरी ओर गीत की पंक्तियां स्वयं प्रश्न उत्तर करती है। स्वर्ग से अष्ट कुल देवता पूछते हैं यह हवन, यज्ञ की मधुर गंध कहीं से आ रही है....? ब्राह्मण के घर बेटा कुंवारा उसके सिर पर तेल व घी की वर्षा हो रही है....। बेटी... तुम्हारे पिता बड़े धर्मी हैं। धन ......गाय का दान तो सब करते हैं।....वह बेटी......कन्या दान कर रहे हैं?

पूछे लेश्रो कूलौ रे परोइतौ ।
क्या घड़ी हुश्रा केरी होई?
जियां घडीए काण्डे कोश्रो
लागा बौदा
सै ई घड़ी हुसा केरी होई।
सर्गे पूछीए श्रष्टकुड़ी देवता
मातलोगे क्या करी चारौ ।
मातलोगौ ए बेटा कुवांरा,
तेसरे शिरे घिश्रो ढ़लौ तेलौ
सर्गो पूछीए
सोला साऊनो
किदा माए श्राउती रे बासौ ।
मातलोगे ए ब्राह्मौ घरे ए,
हुमो लागे जगनौ तिद्दौ श्राए,
श्राउती रे बाहौ ।
सर्गे पूछे ए श्रष्टकुड़ी देवते
किश्रा श्राए श्राऊती रे बासौ ।
ब्राह्मणे गृहेए बेटा कुश्रारा,
तिनौ रे शीरे घियो ढुले ढुल तेलौ,
पैतलोगे पूछीए,
बासकी नागौ,
मातलोगे क्या करी ए चारौ।
मातश्रोगौए दूई कुवांरे
तिनौ रे शिरे
घियो ढलो तेलै ।
पतालै पूछीए,
बासकी नागौ,
मातलोगै बिया माता भाए
पैलगी पूजे बेशौ
रामा देवो (मंत्र रुप में गायन)
सिया राणी, गोरी केरौ राए,

कुल पुरोहित पूछते हैं
हवन की क्या घड़ी है
जिस घड़ी क्षितिज पर कौवे बोलने लगे

वही हवन की घड़ी है
स्वर्ग में अष्टकुड़ी देवता पूछते हैं
पृथ्वी पर क्या क्या हो रहा है?
पृथ्वी पर बेटा कुंवारा है
उस के सिर पर घी डाला जा रहा है
स्वर्ग में
सोला साऊनी पूछती हैं
आहूति की गंध कहां से आई ।
पृथ्वी पर ब्राह्मण के घर,
होम हो रहे है
वहीं से आहूती की सुगन्ध आई है
स्वर्ग में अष्टकुड़ी देवता पूछते हैं
आहुती की सुगंध कहां से आई है
ब्राह्मण के घर बेटा कुवांरा है
उस के सिर घी तेल गिर रहा है
पाताल से
वासुकी नाग पूछते हैं,
पृथ्वी पर क्या हो रहा है
पृथ्वी पर दो कुवांरे हैं।
उन के सिर में
घी तेल गिर रहा है
पाताल से वासुकी नाग
पूछते हैं।
मात लोक पर विया माता पूछती है
पहली पूजा में
राम देव बैठे हैं
सीया राणी भी संग बैठी है ।

इजदी पूजे बेशो शिवजी देव
पार्वती गोरी केरो राए
चीजड़ी पूजे बेणो हनुमान देव,
छाया राणी केरी कये राए ।

दूसरी पूजा में शिवजी बैठे ।
पार्वती भी पूजा में बैठी है
तीसरी पूजा में हनुमान जी
छाया राणी के संग बैठे हैं ।

(इसी प्रकार शिव, कृष्ण ब्रह्मा) आदि का नाम जोड़ कर गान किया जाता है,

पूछे लेश्रो कूलौ रे परोइतै
क्या घड़ी हवनौ री होई?
जागे-जागे कुलौ रे परौइतौ,
घड़े गीए लगणो रे होए,
कागणु गांठे सनागणु गांठे,
गांठ हेरे लगणो रे धागो ।
बाबू मेरा धर्मी लोग,
कन्यादाण कराइये,
श्रम्मा मेरी धर्मी लोग,
जल का लोटा भर लाइये,
बेदी रे अन्दर,
श्राश्रो बापू जी,
बेटी-दाण कराइये ।
श्राए नी श्रामा
धर्म कराइये,
जल का लोटा भर लाइये ।
कपड़े तिपड़े रा दाण
करो नी बापू जी,
बेटी रा दाण कराइये।
श्राश्रो श्रामा जी
धर्मी दाण कराइये
गहण-जेवर रा दाण
करो नी बापू जी।
बेटी रा दाण कराइये।
गाय मई दा दाण
करो नी बापू जी
बेटी रा दाण कराइये।
श्राश्रो नी श्रामा धर्मी,
कन्यादाण कराइये ।
जागे—जागे,
सिया सुहागणे,

कुल पुरोहित पूछते हैं
हवन की कौन सी घड़ी है?
कुल पुरोहित . . . जागो
लग्न की घड़ी हो आई है
कगन व सुनागण बांधो
साथ लग्न के धागे बांधो
तुम्हारे बापू धर्मी है
जिन्होंने कन्या दान किया
मां भी धर्मी है
जल का लौटा भर लाओ
बेदी के भीतर
बापू जी आओ
और कन्या का दान करो. . . .
धर्मी मां
आ गई है
जरा जल का लौटा भर लो।
कपड़े का दान
बापू जी न करो
आज कन्या दान का समय है
मां जी आओ
आज....धर्म का दान करो
गहने जेवर का दान
बापू मत करो. . . . .
बेटी का दान करो,
गाय...भैंस...का दान
. . . बापू मत करो
बेटी का दान करो
धर्मी मां आओ
कन्यादान का समय है।
जाओ . . . .
सीता सुहागिन

घड़े गोए लगणो रे होए,
चड़ीयार खेलौ झिया खेलौ
जियां राधा, कमणी व्याहिए ।
चड़ीयार खेलौ झियां खेलौ,
जिया महादेव पारवती ब्याइयं
चड़ीयार...... खेलौ
रामे सिया राणे ब्याइये ।
(इसी प्रकार विष्णु-लक्ष्मी,. ब्रह्मा-शारदा व शिव-पार्वती जोड़ कर गाना किया जाता है।)

लगन की घड़ी आ गई है
झिया ....व चड़ियार खेलो
जैसे राधा रुक्मणी ब्याही गई
झिया व चड़ियार खेलो
जैसे महादेव ने पार्वती ब्याही
झिया ..... खेलो
जैसे राम ने सीता ब्याही

फेरी मांगते समय:– वर वधू को एक सूत्र में बांध दिया जाता है। तीन बार वर तथा तीन बार बधु आगे चल कर मण्डप के चारों ओर चक्कर लगाते हैं। साथ ही पत्थर की शिला पर दीपिका प्रज्ज्वलित होती है, जिसे वह वधु का पैर हाथ द्वारा उठा कर ब्राह्मण के एक एक शर्त पढ़ने के उपरान्त क्रमशः बुझाता है। इन्हीं सात शर्तों पर दाम्पत्य जीवन आधारित होता है। छः शर्तें वधु की तथा एक शर्त वर की होती है—

रांग रसी लाई,
पहली मंगल गाई,
गोपी गोकल कानबाला,
श्री कृष्ण ब्याहणे आइये ।
रवी तो पूजे लावां,
कृष्ण हरीवर ब्याइये ।
रांग रसी लाई
दूसरी तो इन्द्रपुरीए
इन्द्रा तो ब्रह्मा जी ने लगण गिणीए
किने वेद पढ़ने को आइये
किन वेद पढ़ने को आइये,
वटी से दाण पुन मांगीये,
गंगा जी ने नई बनारसी,
कुरुक्षेत्र नहाणे आइये ।
रवी तो पूजे लावां दूसरी,
राधा रूकमणी ब्याइये ।
रंग रसी लाए,
तीसरी मंगल गाइये,
गोवो गुकुल कनवाला
श्री कृष्ण ब्याहिए ।
रवी तो पूजै लावां तीसरी
राधा रूकमणी ब्याइये ।
रंग रसी लाए,
चौथी तो लगण गठाइये,

रंग रस्सी लाई
मंगल गान करो।
गोकुल के कन्हैया
श्री कृष्ण ब्याह करने चले
पहली पूजन करते हुए ।
कृष्ण (वर) ब्याहने चले
रंग रस्सी लाई ।
दूसरी इन्द्रपुरी में है
ब्रह्मा ने लगन देखे,
वेद पुराण भी पढ़े ।
वेद पुराण पढ़े
और बेटी से दान मांगों ।
गंगा जी के तट
कुरुक्षेत्र में नहाए
दूसरी दीपिका पूजते हैं
जैसे राधा रुक्मणी ब्याही गई
रंग रस्सी लाई
मंगल गाओ
गोपी-गोकुल के कन्हैया
श्री कृष्ण ब्याहने चले।
तीसरी दीपिका पूजते
राधा-रुक्मणी ब्याही।
रंग रस्सी लाई
चौथे लगन में,

श्री कृष्ण जी को अन्दर लायो,
राधा रुकमणी ब्याइये ।

श्री कृष्ण को भीतर लेते हुए
राधा रुक्मणी ब्याहिए ।

भीतर जाते समय:– मां बहू को डोरी में पकड़ भीतर ले जाती है। हां, ब्याह अर्थात् जहां बेटा ब्याहा गया है भीतर जाते थोड़ी नोक-झोंक हो। जाती है यहां देखिए सालियों ने जीजे के लिए द्वार बन्द कर दिया, या द्वार पर फटा पाजामा या धाठू (सास का) टांग दिया––सलो···द्वार खोल दे तुझे··मोती के हार–दूंगा। साली... मोती के हार तो ... मामी अर्थात सास को देना.... हमारा तो पैसों का हक है। मां पूछती हैं बेटा..... क्या क्या दान मिला है? मां.... चांदी... धन का दान तो लोगों ने किया ससुर ने तो मुझे कन्या दान दिया है।

बेटा मेरा तौयों भी ने आओ
आमा बेशे ए
तोगो रे तगोड़ू ए,
बेटा मेरा ब्येओ ले आओ ।
आमा पूछोए,
बेटे कन्हैये काहां पाइये,
इतनी बेरौ,
घाटी सांगवी,
बाटो लागो हांडणी,
घर उटौ सालीए दबारौ ।
आमा पूछो ए बेटे कन्हइये
काहां पाईये एतणी बेरौ
घाली सागडी वाटौ लागी हांडणी
तीबी अडौ लाडी रो झमाणों ।
सालिए दबारो ए पोरौ घवाड़े
ता बेउ मोतिए हारो।
मोती हारो बेउ मोतो रे हारो
बेरे पड़ो ढवुए चारौ।
आमा पूछोए बेटे कनैइये,
क्या दिणो शाउरी घरे दाणौ ।
सुनो चांदे दाण दिणो लोगए
शेओरे दिणो कन्थे रो दाणौ ।
आमा पूछो बेटे कन्हंइये
क्या करी शाऊरी घरे चारौ ।
वांतवे मढ़यो पाटी आमया
लाल दिणों पिउलै दबोरे ।
आमा पूछो बेटे कनेइयें
क्या करी शाउरी रै घरे चारौ

बेटा फिर भी नहीं लौटा
मां बरामदे में
बैठी है
बेटा ब्याह करने आया है ।
मां पूछती है
ऐसे बेटे कन्हैये
इतनी देर कहां डाली
कठिन-तंग
रास्ते चलने को लगे
घर में साली ने शरारत की ।
मां बेटे कन्हैये से पूछती है
इतनी देर कहां डाली?
तंग से रास्ते में
लाड़ी का डोला अड़ता रहा
साली, द्वार खोल दे
तुझे मोती से लाद दूंगा
मोती क हार मामी को दे
मेरा तो पैसे का हक है ।
मां बेटे कन्हैये से पूछती है
ससुर के घर से क्या-क्या मिला
लोगों ने सोना चांदी दिया
ससुर ने कन्या दान में दी
मां, बेटे से काम काज के बारे पूछती है
ससुराल में क्या काम काज चला है?
मां, दांतों से मढ़े
लाल पीले सुन्दर फाटक थे
मां बेटे से पूछती है
ससुराल क्या-क्या काज होता है ?

दाणों दिणों लोगुए	दान लोगो ने दिया
शोउरे दिणों दाणों ।	ससुर ने कन्या दान दिया ।

देहरी पूजनः– विवाह के उपरान्त दुल्हन के गृह-प्रवेश समय गृह भीतर जाते समय ब्राह्मण नई गृह-लक्ष्मी के प्रवेश के उपलक्ष्य में पूजन करता है। वर वधू मां बाप सभी सम्बन्धियों को चरण स्पर्श करते हैं। कन्या चरण स्पर्श करने से पूर्व नगद रुपया प्रत्येक को डालती है तथा वर प्रथम बार ससुराल जाने पर यही क्रिया करता है।

अरगे परोइता अरगो कराए.....	पुरोहित अरगे (अर्घ्य)....
गांगौ केरे पाणी ए अरगो कराए	में जल भर रहे हैं
अरगा परोइता दिनों रे दूदे	साथ ही अरगे में दूध है
दिनों रे दूदे गे अरगो कराए।	दूध... जल का अरगा दिया जा रहा है।
अरगे परोइता छोडेया रे चाउलौ	....पुरोहित साफ किए चावल
छड़ेयों रंग अरगो कराए	चावल... रंग ..... अरगे में हैं
अरगे परोइता कूंगू रेटिके	अरगे में कूंगू का टीका
अरगे परोइता गुगलौ रें धूपें।	अरगे के साथ गुगल धूप
कस दिणों अरगौ	अरगा व धूप
कस दिणों धूपौ	किस को दिया
रामौ दिणों अरगौ	राम को जल धार दी
सिये दिणों धूपौ।	सीता को धूप दिया
लाड़ा-लाड़े दूने भणे	लाड़ा लाड़ी दोनों ....
एको रागें रूपें	एक ही पूजन कर रहे हैं
अरगें परोइता गुगलो रें धूपें	अरगा . . साथ में धूप
शिरे दिणो अरगो पेरे दिणों धूपो।	सिर मे अरगा दिया .... पैरों में धूप दिया
ए सौ गरीए बंए आणे	ये... गृह ब्याह कर आई
कन्या कंवारे	कन्या कुंवारी
बंये आणे कन्या कुंवारें।	कन्या कुंवारी ब्याह लाई
अरगो परोइता, अरगे कराए	पुरोहित .... अरगा दे....
बंये आणे, बंये आणे	ब्याह कर लाई
लक्ष्में राणे।	लक्ष्मी . . .राणी

(रुक्मणीं, शारदा, सीया आदि भी गान में जोड़ दी जाती हैं)

जानकी मंगलः– यह कोई लोक रचना नहीं, अपितु गोस्वामी तुलसी दास द्वारा जानकी मंगल का ही रूप है। भिन्नता सिर्फ यही है कि इसे कुछ अलग ढंग से (उच्चारण से नहीं) गायन रूप दिया जाता है। इस का कोई निश्चित समय नहीं, कभी भी आरम्भ किया जाता है—

प्रथम समिरन गुरुदेव गणेश	पहले गुरु गणेश का सुमरिन करो
शिव थाइये	शिव के गुण गाओ
नारद पूछे जो शारदा	नारद शारदा से पूछते हैं

चिठीओ सब ने आइये।	कोई कुशल-मंगल का पत्र है
आगे-आगे विश्वामित्र महामुनी	आगे मुनि विश्वामित्र
पीछे लक्ष्मण राम जी	पीछे लक्ष्मण जी हैं
सजले ओ तन घनश्याम	सुन्दर तन....के घनश्याम
सकल सुन्दर पूर्ण काम जी	सुन्दर.....काम, गुण से युक्त
कहिए सरजु सनान	सरयू का स्नान करें
नृपति पति गृहा आइये	पति राजा घर आएं
बहु विधि पूजा कराइये	विधि पूर्वक पूजन कर
सिहासन पर बठाइये	सिंहासन पर बिठा,
नैन हरे जल पूर	नयन जल से पूर्ण हैं
पिता और माता से	पिता-माता से
उन को नीचे रखयो	सदा नीचे रखो,
पुत्र हरनाथ के।	प्रभु के पुत्र।
धेन जे धेन जे बेटेया बाबू तेरे	बेटे तेरे पिता धन्य हुए,
जिन्ने भवन बणाया	जिन्होंने पाला पोसा
रघुपति नारायण असती चढ़ाया	रघुपति नारायण असती चढ़ाया
सिया ब्याहण जाइये।	सिया ब्याहने जाइये
धेन जे धेन जे माता	तुम्हारी माता धन्य है
जिन्हें दूध पलाया	जिसने दूध पिलाया
रघुपति नारायण	रघुपति नारायण
असती चढाए	असती चढ़ाया
सिया ब्याहण जाइये।	सीता ब्याइये
धेन धेन मामा तेरे	तेरे मामा धन्य है
जिन्हे तेरा ब्याह कराया।	जिन्होंने तेरा ब्याह रचाया।

(प्रस्तुत जानकी मंगल में पंक्तियों का कोई विशेष, स्पष्ट अर्थ नहीं अपितु गाने के लिए, पंक्तियों से पंक्तियों का मेल बनता है।)

पानी लाते समयः–

कुणी सुहागणे ए,	किस सुहागन ने
माला गोदाए।	माला बनाई?
कुणीए कलशो भराए।	किस ने कलश भरा?
सिया सुहागणे ए	सीता सुहागन ने
माला गोदाए	माला बनाई
पार्वती कलशो भराए।	पार्वती ने कलश भरा।
शिवजीए मुकटो दो	शिव ने मुकट से
गंगा जगाए	गंगा पैदा की
पार्वती कलशो भराए।	पार्वती ने कलश भरा।

कुणी सुहागणेए माला गोदाए
कुणीए कलशौ भराए
सिया सुहागने कलशौ भराए ।
कुणी थाटे भगटौ
कुणे थाटी वाणे
रामे थाटै मगटो जी
सीया थाटै थामें
कुणी . . . . . . बाबे
कृष्णे थाटै मुक्टौ जी
रुकमणी थाटै बामे
(ब्रह्मा पार्वती-विष्णु आदि जोड़ कर
गान किया जाता है ।

किस सुहागन ने माला बनाई
किस ने कलश भरा ?
सीता ने कलश भरा ।
किस ने मुकुट घड़ा ?
किस ने उसे पहनाया ?
राम जी ने मुकुट घड़ा
सीता ने मुकुट पहनाया
किस . . . . घड़ा
कृष्ण ने मुकुट घड़ा
रुक्मणि ने मुकुट पहनाया ।
(ब्रह्मा, पार्वती, विष्णु आदि
जोड़ कर गान किया जाता है)

सीता व्याह:— सीता व्याह बरात के पहुंचने पर गाया जाता है या उस समय जब वर वधू एक दूसरे को माला पहनाते हैं यह गान रामायण के प्रासंगिक अंश का ही उद्धृत रूप है।

सीया धाचे ऋषिए जी
धर्मों रे धीयो =
बोलो—बोलो बेटीए जी
माता आपणे पिता रो नांव ।
कॉए नेंई माता पिता
कोए तेई वंनन-वीरा,
बोलो बोलो बेटीए जी,
गढ़ो आपणो नगरी रो नांव,
सातें धाचे ऋषिए जी
धर्मो रे धीयो
जनकपुरी गढ़ी नगरे
जोध्या पुरे ठाए ।
खड़े जगाओ ए सीया देवी कन्ये,
हाथे करे कूंगू कटोरे,
खड़े जगओ यों सीमा देवी कन्ये,
हाथे केरे पोपो रे माला
पल्के फेरे दिणे सीया देवी कन्ये,
मुनी गीए बोटीए भूले ।
दूजडे फेरे दिणे
सिया देवी कन्ये,
ढलै गीए कूंगू रे कटोरे
कूगूं कटोरीए पोपो रे माला,
ढलै गोए रामौ रे शिरे ।

ऋषि ने सीता पोषण
धर्म की पुत्री सा किया
बेटी, बोलो
तुम्हारे माता-पिता कौन है ?
माता पिता कोई नहीं
न ही भाई बहिन है
बेटी, बोलो
अपनी नगरी का नाम।
सात ऋषि ने
धर्म-पुत्री सा पोषण किया
जनकपुरी मेरी नगरी है,
योध्या मेरी जगह ।
सीता देवी कन्या को जगाओ
हाथ में कूंगू-कटोरी करें
सीता देवी कन्या को जगाओ
हाथ में पुष्प माला करें
सीता ने पलक फेर सब भुला दिये
मुनि जी ने बेटी को भुला दिया।
दूसरा फेरा
सीता देवी कन्या ने दिया
कूंगू की कटोरी गिर गई,
कूंगु कटोरी और पुष्प की
माला राम के सिर गिर गई।

खड़े जगाओ ए
सीया देवी कन्ये,
हाथे करै कूंगू कटोरे
कूंगू कटोरी पोपो रे माला
ढलै गोए रामौ शीरें
चौजड़े फेरे दिणे सीया देवी कन्या
भूलें गोए बेटीए भूलें ।
कूंगू कटोरी ए पपो माला,
ढलै गोए रामौ रे शीरे
ज्यूड़ी चढ़ाओ ए
शाठ मण धनशो,
तेस सायी लगणो कराए ।
केत्तो मण धनशो
केत्ती मण बाणों
रामे लाए लाखणों चढ़ाए ।

सीता देवी
कन्या को उठाओ
हाथ में कूंगू की कटोरी करें
कूंगू कटोरी, पुष्प की माला
राम के सिर गिर गई।
सीता देवी ने तीसरा फेरा दिया
और डोरी में बंध गई
कूंगू कटोरी, फूलों की माला
राम के सिर गिर गई
प्रत्यंचा चढ़ाओ,
साठ मन धनुष की,
और वर से लगन कराओ,
कितने मन . . . . . धनुष
कितने मन . . . . . बाण
राम लक्ष्मण . . . . . इसे चढ़ा रहे हैं।

लाड़ी आते समय :-

तुमें लाड़ी भली आई
दूरो पारो,
तुमें बेशौ पीपलो री छाई ।
तुमें लाड़ी भली आई
दूरो पारो,
तुमें बेशी बड़ी केरी छाई ।
तुमें लाड़ी भली आई
दूरो पारो =
तुमें बेशो मदनू री छाई ।
जेजो दूरे आओ
लाड़ी रो झमाणों,
सूनें लागौ चांदी रे बबूरौ
जेजो धूरै आओ लाड़ी री झमाणो
मण्डो लागौ मोती रे बबूरौ
केसी आओ केसी आओ
घोड़ा पलगे
केसी सामने लाणी री झमाणो
टिरी आओ
टिरी आओ , घोड़ा पलगें,
खोली आओ लाड़ी रो झमाणें।

लाड़ी ! तुम खूब आई
दूर-बहुत दूर से
पीपल की छाया में बैठो।
लाड़ी खूब आई,
दूर-पार से
पीपल के तले बैठो।
लाड़ी खूब आई,
दूर पार से
तुम मदनू की छाया में बैठो।
जिस दिशा से आया,
लाड़ी का झामण आया
सोने चांदी की बसर लगी ।
जिस दिशा लाड़ी का झामण आया
मणी-मोती की वर्षा लगी
किधर-किधर से आया
घोड़ा-पालकी
कहां से लाड़ी का झामण आया।
टीरों से
धारों से घोड़ा पालकी आई
मुख्य द्वार से लाड़ी का झामण आया।

सिये रो सनेहा
रामा गेले लगणो ले आए।
लोगणों ले सीया आए
आणे ले केओ इ
कपड़े लादे पडो बेरो
लाड़ा देओ ए
हरी के सनेओ
तुमें लोड़ी लगणों लं सीवा
लोगणें लै सीया
अण लं करूतौ
गैणे लांवं पडो बेरौ ।
लाड़ा देओ लाड़ी के सनेआ
कुणे लोड़ी लमणों लै सिया।
लगनौ लै सीया
आणों नं करूतौ
सालवं लांदें पड़ी बंरौ ।
लाड़ा देओ लाड़ी खे सनेआ
तुमें लोडो लगगों ले सिदा
अट लं करूयौ
चोगं लांवे पडौ बंरौ ।

सीता का स्नेहा
राम लगन के लिए आए ह
लगन के लिए
सीता कहां से लाए ?
कपड़े डालते समय देर हो जाती है।
लाड़ा अपना
सन्देशा देता है।
लगन को सीता
लगन के लिए सीता
कहां से लाए ?
गहने लगाते देर होती है।
लाड़ा लाड़ी को सन्देशा देता है
लगन के लिए सीता किस ने ढूंढी ?
लगन के लिए
कहां से सीता लाए ?
सालवा लगाते देर होती है।
लाड़ा लाड़ी को सन्देशा देता है
तुम लगन के लिए सीता
कहां से ढूंढें
चोगे डालते देर लगती है।

मेहमानों का गृह प्रवेश करते समय :—

कुणीए आणे ए
वेदीओ शेदीओ
कुणींए निऊंदा जो दिणा ?
बाबूए आणे ए
वेदीयो वेदीयो
बेटे निऊंदा ओ दिणा ।
कुणीए आणे ए
वेदीयो शेदियो,
कुणीए निऊंदा दिणा ?
आमीए आणे
बेदीओ शोदियो,
आमें निऊंदा ओ दिणा ।

किस ने
बुलाया है,
किसने निमन्त्रण दिया ?
बापू ने
बुलाया है।
पुत्र ने निमन्त्रण किया
किस ने
बुलाया ?
किस ने निमन्त्रण दिया !
मां ने
बुलावा भेजा,
मां ने ही निमन्त्रण दिया।

(मामा चाचा भाई चाची आदि भी इसी प्रकार जोड़े जाते हैं।)

बरात आते समय

बडी दूर से आया लाड़ा
ए नवाव दा
पगडी तेरी लाख दी
शीरा करोड दा
बड़ी दूर से आया लाड़ा
ए नबाब दा।
शीरा तेरा लाख दा
पगड़ी करोड़दी ।
बड़ी दूर से आया लाड़ा
ए नबाब दा ।
चोगा तेरा लाख दा
सालवा करोड़ दा ।
बड़ी दूर से आया लाड़ा
ए नबाब दा
सुथणु तेरा लाख दा
जूती करोड़ दी

दूल्हा बड़ी दूर से आया
नवाब सा है
पगड़ो लाख की
सेहरा करोड़ का
दूल्हा दूर से आया
नवाव सा
सेहरा लाख का
पगड़ी करोड़ की
दूल्हा दूर से आया,
नवाब सा लगता है।
चोगा एक लाख का,
सालवा करोड़ का।
दूर से आया लाड़ा,
नवाव सा है।
फिट्ट पाजामा लाख का
जूती करोड़ की है।

जाते समय

आज तेरे बेटे लौडड़े जी
आज होए भरी जवानीए -
रोए न रोए बाल्ली बेटीए
जाणा पड़ो शाऊरी रे घरे
आजौ ------ लोडड़ें
आज होए देउली इ दूरो
रोए न रोए बाली बेटीए
जाणा पडो शाउरी रे घरो दूरे
समणी तो छूटे गोई साथणी जी
छूटे गोआ बाबू रा घरो दूरे
छूटे गोई घुंण्डी रा खेलो
छूटे गोई साथणी ी
रोए न रोए बाली बेटीए जी
जाणा पडो शाऊरी रे घरो
खड़े टेको डोलं अमाणी ओ जी
बाबू मेरे मिलणे आए ओ
मिलो तो मिलो रे बाबू मां जी
जाणा पडो शाउरी र घरो ।

आज तुम्हारी बेटी छोटी है,
आज जवान हुई है।
बेटी, मत रो
ससुराल जाना ही पड़ता है।
आज तुम्हारी .....छोटी है।
आज देहरी से दूर हुई है।
बेटी न रो
आखिर पराया घर ही देखना है।
सभी सहेलियां छूट गई
बापू का घर भी छूटा
सभी सहेलियां छूट गईं।
बचपन का 'घूण्डी' खेल भी छूटा।
बेटी मत रो,
जाना तो पराए घर पड़ता है।
डोली को रोको
बापू मिलने आए हैं।
मां बापू मिलें तो सही
पर जाना पराए घर ही पड़ रहा है।

इस प्रकार विवाह-गीत विभिन्न कर्मों, कृत्यों पर गाये जाने वाली लोक रचनाएं गेय रूप में और भी मधुर लगती हैं। अलग अलग गतिविधियों पर गाये जाने वाले लोक गीत अलग अलग लय में गाये जाते हैं। एक आध स्थान पर (जैसे लाड़ा आते समय) गाये जाने वाले गीत में पंजाबी गीत घोड़ी का रूप मिलता है जो यहां कुछ अलग अन्दाज़ में गाया बजाया जाता है।

शिमला क्षेत्र के ऊपरी व निचले भागों में लय उच्चारण में भले ही भिन्नता मिले परन्तु पंक्तियों में अक्षरांशतः समता होगी। आज का गतिशील समाज अपने प्रभावशाली चापों द्वारा परिवर्तन की परतों में दबता जा रहा है। उन्नति की होड़ में बढ़ता हमारा समाज प्राचीन संस्कृति, परम्परागत गीतों को भूलने के क्रम में आधुनिक बनता जा रहा है। हमें प्राचीन प्रथाओं-गीतों की अमूल्य निधि को नजर अन्दाज़ करने, उपेक्षा उभारने के उपक्रम को समाप्त करना होगा, तभी हम अपनी संस्कृति के पूर्ण उजागर करने में सफल हो सकते हैं।

—स्वास्थ्य तथा परिवार कल्याण निदेशालय,
कनेडी हाऊस, शिमला-4।

In modern society what distinguishes Folklore from the rest of the culture is the preponderence of the handled down over the learned element and prepotency that the popular imagination derives from and gives to custom and tradition.

—Standard Dictionary of Folklore, Mythology and Legend.

लोक संगीत
(गायन, नृत्य एवं वादन)

—'सलीम'

संगीत चाहे शास्त्रीय हो या लोकसंगीत, गायन, नर्तन एवं वादन इसके तीनों मुख्य तथा आवश्यक अंग हैं। यदि महासुई लोकसंगीत की खोजबीन की जाए तो संगीत के इतिहास में एक और अत्यन्त रोचक अध्याय जुड़ सकता है। आइये, आपको महासुई लोकसंगीत के इन तीनों अंगों से परिचित कराएं। संगीत के अन्तर्गत गायन प्रधान एवं मुख्य अंग है। गायन के साथ-साथ गीत रचना का सम्बन्ध भी चोली दामन का सा साथ है। हमारे पास महासुई लोक संगीत के इतिहास की साक्षी कुछ एक प्राचीन प्रचलित एवं अप्रचलित रचनाएं अभी भी सुरक्षित हैं जिनसे तत्कालीन अनपढ़ आशु कवियों की सुन्दरतम कृतियों का लोहा मानना ही पड़ता है। गीत और संगीत दोनों ही पनप न सके क्योंकि महासू एक दुर्गम पहाड़ी क्षेत्र होने के नाते शास्त्रीय संगीत के विद्वान यहां तक न पहुंच पाए और हमारा लोकसंगीत पीढ़ी दर पीढ़ी पैतृक सम्पत्ति के रूप में जो कुछ पनप सका, पनपा। इस लेख में मैं पाठकों को संगीत के सभी अंगों का विस्तार से वर्णन नहीं कर पाऊंगा लेकिन मैंने अपनी प्रकाशनाधीन पुस्तक "महासुई लोक संगीत का इतिहास" में इसके सभी अंगों का पूर्ण और विस्तृत वर्णन किया है।

गायनः—वर्गीकरण की दृष्टि से महासुई गायन को हम क्रमशः भारथ, लामण, भोंर ('भोंरू') झूरी (Zhoori) तथा नाटी नामों से पुकार सकते हैं।

भारथः—भारथ अर्थात् गाथा महासू के प्राचीनत्तम लोकगीतों में से एक है। धार्मिक, सामाजिक, एवं ऐतिहासिक प्रसंगों का काव्य एवं संगीतबद्ध चित्रण भारथ कहलाता है। यद्यपि अब यह अनिबद्ध (Rhythmless) गायन शैली प्रचार में नहीं है तो भी कहीं-कहीं बड़े बूढ़ों या दादी मां से रामायण, महाभारत, कृष्ण जन्म, भर्थरी, थाथा, बीणी, महास्ती, ठूंडू कम्बराऊ आदि गाथाएें भारथ के रूप में सुनी जा सकती हैं। लीजिए आपकी जानकारी के लिए "ठूंडू कम्बराऊ" नामक "भारथ" की पंक्तियाँ स्वर लिपि सहित प्रस्तुत हैं—

"भुलं री भुलाईयें केरे भुलाए, भंडो गोइयो ठुंडू री बोनलं आए"।

भरे–,	मपवनि	——,	धप म–रे–,	धप म–4,	रेमरे—
भुलैऽ,	रीऽऽऽ	ऽऽऽ,	मुऽलाईयऽ,	वोऽ,रेऽमु,	लाएऽऽ
धसा–,	रेमरे,–,	रेसासा–,	धसासा–,	रेरे—,	रेसारेसा—
भै डोऽ,	गोइयोऽ,	ठुडूरीऽ,	धौन लैऽ,	ऽऽऽऽ,	जाऽए ऽऽ

उपरोक्त भारथ की पंक्तियां तालरहित प्रकार से ही गाई जाती हैं। इसमें ताल को विशेष महत्व नहीं दिया जाता।

लामण:—भारथ के पश्चात् प्राचीन ताल रहित लोक गीतों में लामण का स्थान सर्वोपरि है। यद्यपि यह गायन शैली भी अब प्रचार में नहीं है तो भी कहीं-कहीं धान की रोपाई या घास काटने वाले किसानों से लामण सुनने को मिल सकते हैं। लामण श्रृंगार रस प्रधान गीतिकाव्य होता है। उदाहरणार्थ:-

हिजौ बोदा था वे लामणा, हिजौ कंइयें नो एश्रा।
भातमुंए चाणा थिया जिरी रा श्राशुऐ पौ श्रोलणं खेश्रा।

रे मप–,   पध पधनि—   धप,   प——म,   धपधप (प) —म–म– –
हिजोऽऽ,   वोदा थावेऽऽऽ   ऽऽ,   लामणाऽऽ,   हिजौ कैई यैनीऽ एऽ श्राऽऽ।
सा सा
धप पपप–म   धप– –म,   धप——,   धप– – – –,   म म – – –॥

भात मुएचाणा थिया जिरीरा ऽऽ, श्राम ऐ पौऽ,   श्रोलणेश्रोऽ, खेश्राऽऽऽ॥

भोरू (भोंर):—भोंरू या भोंर भी लामण की ही तरह का ताल रहित प्रकार है तथा इसकी छन्द रचना भी लामण के ही समान है। अन्तर केवल इतना है कि जहां लामण श्रृंगार रस प्रधान है वहां भोंर वीर रस प्रधान गायन शैली है। भोंर गायन प्रायः मेले इत्यादि में अपने प्रतिद्वंद्वी को ठोडा के लिए ललकारने तथा शादी ब्याह में कहीं व्यंग्य कसने में प्रयुक्त होता है। अब ये भी बहुत कम प्रचार में दृष्टिगोचर होता है। प्रस्तुत पंक्ति पांशा नामक भारथ से है जीता और गाजण नामक भाइयों को कत्ल करने के बाद दुश्मन ताना कसते हैं कि ये दोनों चक्की पर खट्टी लस्सी से सतू खा रहे हैं।

घौटौ जाणी रे काऽरें भोंरा पोरे पाइयौ जाए।
जीतें लेएश्रौ गाजणें खाटिये शऽये पौ सातरें खाए॥

रेमपपप——,   मधप——,   धपप——,   धप——,   मधपप– – – –,   मम——

घौटौ जाणिरेऽऽऽ,   काऽरेंऽऽऽ,   भोऽराऽऽऽ,   पोरेऽऽऽ,   पाइयौ बेऽऽऽ,   जाएऽऽऽ।

ध पपपप—,   मधपप——,   मधपपप——,   पप—म–,   धपपपप–   प–गम—

जीतें लेए श्री-ऽऽ,   गाजणेऽ ऽऽऽ, खाटिए ऽऽ पौरे, शाशये ऽऽऽ, सातरे ऽऽ, ऽऽ, खाए ऽऽ

झूरी:— महासुई लोकसंगीत में झूरी नामक गायन प्राचीन काल से लेकर अब लगातार लोकप्रिय रहा है। झूरी क्षुद्र गति की श्रृंगार रस प्रधान गायिकी है। झूरी प्रायः दोनों ही प्रकार से ताल रहित तथा ताल में गाई जाती है। ताल रहित झूरी जैसे :-

झूरी (ZHOORI)

"हांड़दें हांड़दें झूरिये बे खुटड़ू गोए श्रौ खौड़े रे,
दूरे रोए श्रौ नौगरे श्रोरे।
सौंधड़ू इयिऐ गोएश्रौ पौड़े रे,
सौंधड़ू बे पौड़े श्रोरे॥

गमपध   पमप   मपधनि – –,   ध–नि– –,   धपध– –, पम–मप – – मग–   रसा।
हांड़दै ऽ   हाड़ दै   झूरियै वेऽऽऽ, खुटडू ऽऽ, गोए श्री ऽऽऽऽ खोडे ऽऽ श्रोरे ऽ ऽऽ।
ग–   मप–   ध–पम,   म–प–   मगम – – – ।

दूऽरे रो ए श्रौ ऽऽऽ, नौ ग रे ऽ श्रोरे ऽऽऽऽ।
गमपध –नि– –, धपप–मप–मग–रेसा।

सौं धूड़ ई थियेऽऽ, गोइयेऽ, पौडेऽ रेऽ ऽऽ।
सा – – –, गम पध– –, पम, मप – – मगम– – –॥

सौं ऽऽऽ ऽधड़ू बे ऽऽ, ऽऽ पौडे ऽऽ श्रौरे ऽऽऽऽ॥

निबद्ध झूरी :— निबद्ध झूरी की स्थाई ताल में तथा अन्तरा छूट से गाए जाने की प्रथा प्रचलित है, जैसे :-

लांवे मेरेया वे विड़छा छोटे ढ़ौलौ ली छाई रे,
भौई लागो जिंवड़े पीछा नहीं छोड़णा, मौमतें री ताई भई छुमा मेरिये।

सा सा –, गमपध नि – –, धनि धप, में –पध धप, मधपम– – –गरेसा ग – रे सा।
लां वैं ऽ, मे रे यावे ऽऽऽ, बिड़छाऽ, छोटे ढ़ोलौ ली ऽ ऽऽ ऽऽऽऽ, छो ऽ ई ऽऽ रे ऽ।

1	2	3	4	5	6	7	8
निसा	रेसा	रेग	गरे	गम	पम	गरे	रेसा
भौइ	लागौ	जिंद	डेऽ	पीछा	नेंई	छोड	णा ऽ
×	2		3		4	5	
निसा	रेसा	रेग	गम	गऽ	रेसा	साऽ	ऽऽ
मोम	तें री	ताई	मइ	छुमा	मेरि	येऽ	ऽऽ
×	2		3		4	5	

नाटी:—वास्तव में नाटी गायन का नहीं लोक ताल का नाम है। इस ताल में गाई जाने वाली रचनाओं को भी नाटी के नाम से ही पुकारा जाता है। इस ताल के तीनों लयों के बोल भी पृथक हैं इसीलिए इसमें गाई जाने वाली नाटियों के नाम भी क्रमशः (1) माला, घिश्रौ, धी, या रेंहली) (2) मूंजरा (Munzra) तथा (3) छिटकुण नाटी क नाम से पुकारा जाता है। इसमें माला नाटी विलम्बित लय की नाटी है। इसमें कुछ नर्तक सामूहिक रूप से एक दूसरे के हाथ पकड़कर गाते हैं और नृत्य भी करते हैं। इस प्रकार की नाटी का एक उदाहरण है :-

गोरु चारें ले बाकरी मौणिऐ थौरी पोरूऐ बौणें,,
मौणिऐ थणेट किऐ ऐ रे, थौरी पोरूऐ बौणें ।।

1	2	3	4	5	6	7	8
ग	म	ग्रे	ग्रे	सा	धनि	सा	रे
गो	रु	चारे	लेड	बा	करि	मौ	णिए
×	2		3		4	5	
ग	म	ग्रे	ग्रे	नी	सा		
थौ	ो	पोरू	वैऽ	बौ	णै	ऽ	ऽ
×	2		3		4	5	

मुन्जरा नाटी (MUNZRA):–) इस प्रकार की नाटी गाने के लिए कुछ लोग वृत्त बना कर बै जाते हैं और एक व्यक्ति मध्य में खड़ा होकर नृत्य करता है। शायद यह शब्द उर्दू के 'मुजरा' से बिगड़ कर बना हो। इसके गाने और नाचने का प्रकार ठीक पूर्व वर्णित निबद्ध झूरी की तरह ही है।

छिटकुण नाटी :—यह नाटी दोनों प्रकार की नाटियों का मिश्रण है। इसे माला की तरह सामूहिक रूप में भी प्रस्तुत किया जाता है (माला से चार गुनी लय में) तथा जरा की मुंतरह ही एक व्यक्ति भी प्रस्तुत करता है। इसमें सिर्फ लय का ही अन्तर है। जैसे :--

चिड़्यो चौड़ुआ काले ओ काग।

1	2	3	4	5	6	7	8
							सा
							खि
रे	म	पग	रे	ग	रेसा	सासा	
ट	यो	चौड़ू	आ	का	लेयो	कागा	ऽ
×	2		3		4	5	

नर्तन (नृत्य):—महासुई लोक संगीत में नर्तन की भी अपनी अलग ही विशेषता है। नर्तन के विचार से महासुई लोक संगीत को तीन भागों में बांटा जा सकता है (1) विलम्बित लय अर्थात माला नृत्य (2) मध्य लय अर्थात मुन्जरा नृत्य (3) द्रुत लय अर्थात छिटकुण नृत्य ।

माला नृत्य:—यद्यपि सभी नृत्य नाटी ताल में है तथापि यह नृत्य नाटी ताल की विलम्बित लय में किया जाता है। नाटी ताल में आठ मात्राएं होती हैं प्रत्येक मात्रा पर एक एक कदम आगे बढ़ा कर यह नृत्य किया जाता है अर्थात माला नृत्य के बन्धे बंधाए आठ कदम होते हैं उसी प्रकार उन्हें ोहराया जाता है।

मुन्जरा नृत्य:—यह नृत्य भी नाटी ताल की मध्य लय में किया जाता है। इसमें नर्तक कभी अपने पांव पर ही घूमता है, बै ता है, तथा घुटनों कंधों और हाथों से प्रत्येक मात्रा को सुन्दरता से दर्शाता है।

छिटकुण नृत्य:—यह नृत्य भी या तो माला के प्रकार से ही माला की चौगुनी लय में सामूहिक रूप से किया जाता है या मुंजरे की तरह ही एक व्यक्ति द्रुतलय में नृत्य करता है इस लय में बजने वाला एक विशेष वाद्य होता है जिसे हुड़की कहते हैं। इस लय पर यह वाद्य बहुत ही सुन्दर लगता है

वादन:—महासुई लोक वाद्यों में नगाड़ा, ढोल, दमामा, हुड़की, खंजरी, शहनाई करनाल और नरसिंहा विशेषकर उल्लेखनीय है। महासुई ताल वाद्यों पर विभिन्न प्रकार के ताल या बधाई, (नौबत, बेल, पूजा सतनाओं) देऊकरा, बैंरूई बांऊठी, ठठोईर, रूहैली और नाटी इत्यादि बजाए जाते हैं। मैं इस छोटे से लेख में आपको सभी वाद्यों के बोल और लय से परिचित नहीं करा सकूंगा लीजिए आपको माला, मुन्जरा और छिटकुण नाटी में क्रमशः ढोल और हुड़की के बोल से अगवत कराऊं। नाटी आठ मात्राओं और पांच तालों का ताल है। इसकी विशेषता इसकी आड़ में तालियों की सुन्दरता है। इसकी पांचों तालियां क्रमशः पहली,, दूसरी, चौथी, छटी और सातवीं मात्रा पर पड़ती हैं।

नाटी ढोल पर (विलम्बित)

1	2	3	4	5	6	7	8
धि	ता ता	धि	ता ता	धागे	ता ता	तिरकिट	धा धा
×	2		3		4	5	

नाटी ढोल पर (मध्य लय)

धागे ना	ति	धागे	नाती	धागे	नाती	धागे	तिरकिट
×	2	3			3	5	

नाटी हुड़की पर (द्रुतलय) चार गुना में

धिधि	ता	धि	धाऽ	धि	धाऽ	धिऽ	ता
×	2		3		4	5	

[चौपाल,
शिमला

"किसी देश के साहित्य का सम्बन्ध उस देश को सांस्कृतिक परम्परा से होता है।
अतः साहित्य की भाषा उस संस्कृति का त्याग करके नहीं चल सकती"।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

महासू क्षेत्र

वेश-भूषा और खान पान

—भुवनेश्वरी

प्रचलित कल्पनाओं के अनुसार वेश भूषा की उत्पति और विकास का कारण मानव की स्वाभाविक रूप
सज्जा और शृंगार की भावना है। एक मत यह भी है कि पुरुष की ईर्ष्या ने ही विवाहिता स्त्री के लिये वस्त्र
व परिधान का आविष्कार किया और प्रथम वस्त्र को धारण करने वाला पुरुष नहीं अपितु विवाहिता स्त्री थी।
उस समय वस्त्र का मुख्य उद्देश्य स्त्री को अन्य पुरुषों की दृष्टि में अनाकर्ष बनाना था। दूसरे शब्दों में वस्त्र
के जन्म का मुख्य कारण पुरुष की ईष्या भावना और नारी काशील स्वभाव एवं सतीत्व है। जलवायु को
भी वस्त्र के आविष्कार का एक कारण मान सकते हैं। आदि मानव जब गर्म जलवायु क्षेत्र से शीत प्रदेश की
ओर बढ़ा होगा तो उसे ऐसे परिधान की आवश्यकता प्रतीत हुई होगी जो उस के शरीर को ठंड से बचाये
और यही वस्त्र का आदि रूप था।

महासू क्षेत्र में प्राचीन काल से लेकर अब तक विभिन्न प्रकार के वस्त्रों के उद्भव और विकास का पता
यहां की परम्पराओं, प्राचीन मन्दिरों में बनी काष्ठ, प्रस्तर तथा धातु की मूर्तियों, पुराने पहाड़ी शैली के चित्रों
तथा लोक गीतों से लगता है। देव स्थलों में मुख्य है-हाटकोटी, निरत, दत्तनगर, सराहन, सराहां, मानन, जावल
आदि आदि। इन मन्दिरों में लकड़ी पर खुदी हुई मूर्तियां से उस समय के वस्त्रों तथा आभूषणों को अज्ञात
कलाकार ने बड़े चतुर ढंग से दर्शाया हुआ है। कई स्थानों पर मृतकस्मारक भी पाये जाते हैं। कई जगह
इन्हें 'बरशिला' भी कहते है। लेखिका ने इस प्रकार की कुछ मूर्तियां हाटकोटी में, और कुछ जुब्बल के एक गांव
शाड़ी और रोहड़ू के गांव करालश में देखी है। इन मूर्तियों में पुराने समय के वस्त्र आभूषण अंकित किए हुये हैं। अठारहवीं
और उन्नीसवीं शताब्दी में अरकी, जुन्गा, जुब्बल आदि आदि स्थानों में जो पहाड़ी शैली के चित्र चित्रित किये गये
उन से नगर के लोगों के पहरावे का पता चलता है। समय समय पर अपनी यात्रावलियों में विदेशी यात्रियों ने
भी इस क्षेत्र के पहरावे का वणन किया है। इन सब में सबसे महत्वपूर्ण जेमस वैली फ्रेज़र हैं उस ने गोरखा युद्ध
के समय के यहां के लोगों तथा स्थानीय सैनिकों के पहरावे का उल्लेख ही नहीं किया बल्कि वे सुन्दर रंगीन चित्र
भी बनाये जो लन्दन से 1820 में प्रकाशित हुये। चित्रों तथा यात्रावलियों से यह भी पता चलता है कि
मुसलमानी वेश भूषा का यहां की स्थानीय वेश भूषा पर क्या क्या प्रभाव पड़ा। प्राचीन काल में यहां
पर बुने जाने वाले ऊनी कपड़ों की मुगल दरवार में बहुत मान्यता रही। उस समय मैदानी भाग से बहुत
से व्यापारी ऊनी तथा पशम के बुने हुये माल को खरीदने के लिये आया करते थे। यहां के बुने हुये शालों की
प्रशंसा किये बिना मुमताज महल भी न रह सकी और उसने बुनकरों को राजकीय प्रोत्साहन दिलाया। इसी
प्रकार एक बार लार्ड डफ़िन घूमने के लिये बग्धी (तब बुशैहर राज्य का एक भाग) गये तो उन्हें वहां पर
बुशैहर की बनी हुई पशम की चादरें भेंट की गईं। लेडी डफ़िन ने उन्हें देख कर कहा था कि बुशैहर की यह पशम
की चादरें यूरोपीय पशम से बनी चादरों से कहीं अधिक गर्म और नर्म है। रामपुर की बनी हुई पशम और ऊन
की चादरों की प्रशंसा जार्ज वाट ने भी अपनी पुस्तक में बहुत की। यें चादरें ओढ़ने तथा ऊनी कपड़े बनाने
दोनों के काम आती हैं।

जलवायु तथा समुद्रतल स ऊंचाई के कारण महासू की वेश भूषा दो प्रकार की है, एक सूती दूसरी
ऊनी। सूती वस्त्र निचली घाटियों जैसे सोलन और नालागढ़ की ओर के भागों में पहने जाते हैं। 4,000
फुट से ऊपर की ऊंचाई पर रहने वाले लोग अधिकांश ऊनी वस्त्र पहनते हैं। 1948 से पूर्व इस भू-भाग को छोटे
छोटे राज्य में बंटे हुए रहने के कारण तथा भौगोलिक विभिन्नता के कारण इस क्षेत्र के एक स्थान से दूसरे स्थान
की वेश भूषा में काफी अन्तर पाया जाता था। एक उदाहरण के लिये जहां रोहड़ू क्षेत्र में पुरुष चपक पहनते
हैं वहां चौपाल में लोया। कहीं कहीं तो एक ही स्थान में कई प्रकार के कपड़े पहने जाते हैं जैसे कि रोहड़ू तहसील।
उदाहरण के लिये चढ़गांव में एक ही गांव में कई स्त्रियां सिर पर बुशहरी टोपी, कई ढाठू, कई टाला
टोपा और ब्राह्मण स्त्रियां कुछ पगड़ी की प्रकार का लाल वस्त्र पहनती हैं। महासू में पुरुषों के वस्त्र
चुस्त और स्त्रियों के ढीले और लम्बे होते हैं।

यहां पहने जाने वाले वस्त्रों को पांच भागों में बांटा जा सकता है। पहला सिर का वस्त्र जिस में टोपी,
चादर, ढाठू और पगड़ी आते हैं, दूसरा छाती का, इसमें स्त्रियों की अंगिया आदि वस्त्र। तीसरे छाती से कमर
तक के, इस में कोट, अचकन या चपकन, कुरता—कुरती वगैरहहै। चौथे कमर से घुटने तक, जिस में पाजामा,
सलवार, धोती हैं। पांचवें है पैर के जूते और जुराब। प्रत्येक वस्तु के लिये स्थानीय बोली में पृथक पृथक नाम
हैं।

यह वस्त्र शरीर की रक्षा ही नहीं करते वल्कि शोभा भी बढ़ाते हैं।

महासू भूखण्ड के लोगों के खान पान को यहां की भौगोलिक परिस्थिति और जलवायु ने एक बहुत बड़ा
मोड़ दिया। यह प्रदेश पर्वतीय हैं। इसमें ऊंची ऊंची पहाड़ियों और नीची घाटियां हैं। नीची घाटियों में यहां
थोड़ी बहुत भूमि समतल है। और नदी नालों के किनारे सिंचाई की सुविधा है। धान की खेती होती है और
बाखल भूमि में मक्की की खेती होती है। लोग गाय भैंस पालते हैं। अतः इन घाटियों में बसे लोगों का मुख्य
भोजन चावल, मकई की रोटी और घी दूध है। अधिकांश पकवान भी चावल के बनते हैं। चावल से दूध या
अफीम दाना की खीर, चावल के असकलटू या सीडकू, दाणा भात, चावल फूलपाफड़ लोकप्रिय पकवान है। मक्की
घी रोटी और सत्तु छाछ के साथ रोज मर्रा की खुराक है।

ऊंचे पर्वतों और ढ़लवानों पर गेहूं, जौ, कोदा, या मडवां, चोलाई या बाथू पैदा होता है। आलू भी बहुत
होता है। चरगाहें बहुत है, इसलिये लोग भेड़ बकरी पालते हैं। यहां के आहार म प्रमुखता गेहूं, मंडवा व बाथू
की रोटी है। अधिकांश लोग मांसाहारी हैं। सम्भवतः यह शीत प्रदेश होने के कारण और भेड़ बकरी के पालन
के कारण सभी पकवान गेहूं के बनते हैं। इनमें गेहूं के अफीमदाना या माश की पीठी के बेसन में सीडकू,
तेल म तले पुरी नुमा मोटे पोलडू या बाबरू, माश के बड़े कागज़ की तरह पतले पटान्ड़े, हलवे की भांति
पानी में मीठा या नमकीन घौइन्डा या बाडी, गेंद की प्रकार के गोल खोबली और लौंटे या लौंटू। अरबी के पत्तों से
गोबटू और धीन्धड़े, कुलथ के इन्डरे आदि आदि तीज त्योहारों के मुख्य पकवान हैं।

मुख्यतः लोग दिन में तीन वार भोजन करते हैं। प्रातः आठ नौ बजे के लगभग लोग थोड़ी थोड़ी रोटी
खाते हैं। इसे कई जगह 'जशरी' और कई जगह टुकड़ा कहते हैं। इसे खाने के पश्चात लोग दूर-दूर खेतों और
वनों में काम करने चले जाते हैं। दिन को बारह एक बजे क लगभग लोग खाना खाते हैं तो उसे दपहरे या कलैर
कहते हैं। रात के खाने को ब्याली कहते हैं। परिवार के सभी सदस्यों का एक प्रकार का भोजन बनता है और
सभी एक साथ बैठ कर खावे हैं।

—द्वारा गोवर्धन सिंह
हिमाचल प्रदेश सचिवालय,
पुस्तकालय, शिमला 171002

महासुई उपभाषा और साहित्य

—मीना ठाकुर

महासुई उपभाषा हिमाचल प्रदेश के हरातला पर्वत शैलमाला की मुख्य उपभाषा है। पहाड़ी भाषाओं में इसका स्थान पश्चिमी पहाड़ी के साथ है। निम्नलिखित रूप रेखा से इसकी स्पष्टि की जाती है—

(क) वैदिक आर्यभाषा के परिवार से हिन्दी, बंगला, गुजराती, मराठी की तरह ही पहाड़ी भाषा आधुनिक भारतीय आर्य—भाषा है।

(ख) पहाड़ी भाषा के तीन रूप माने गए हैं—पूर्वी पहाड़ी (नेपाली, गोरखाली), मध्य पहाड़ी, (गढ़वाली, कुमांउनी) और पश्चिमी पहाड़ी (आधुनिक हिमाचल प्रदेश की पहाड़ी भाषा)।

(ग) पश्चिमी पहाड़ी को ही आजकल पहाड़ी भाषा कहा जाता है, पहाड़ी भाषा की बोलियों के सम्बन्ध में कुछ मतभेद रहा है। यातायात की सुविधाओं के सुलभ होने पर और जिन्दगी की रेल पेल के नए आयामों में ढूंढने पर आजकल पहाड़ी भाषा की मुख्य बोलियों में सिरमौरी, क्योंथली, बघाटी, हिंडूरी, कहलूरी, मंडियाली, कांगड़ी, चम्बियाली और कुलुई है। पहाड़ी भाषा के साथ लाहुल-स्पिति और किन्नौरी की किराती आधार वाली बोलियां का एक अलग प्रकार का सम्बन्ध है। पहाड़ी भाषा की इन बोलियों में जब साहित्य-सर्जन आरम्भ हुआ तो वे परस्पर निकट आईं और साहित्य उभार के कारण उन में जमाव टिकाव आने लगा। साहित्यिक स्तर पर बोलियों के समूहों से साहित्यिक उपभाषाएं रूपान्तरित हुईं।

अप्रैल 1948 में जब हिमाचल प्रदेश का प्रशासनिक गठन हुआ था तो शिमला पर्वत शैलमाला की लगभग दो दर्जन छोटी छोटी रियासतों के विलय से महासू नाम से एक ज़िले की स्थापना हुई थी। उस विलय से क्योंथली, बघाटी और हिंडूरी बोली समूह के लोगों की जीवन क्रियाएं आपस में अधिक निकटवर्ती बनीं। पहले क्योंथली स्वयं एक बोली–समूह था, उसमें कई बोलियों के नाम गिनाए जाते थे, परन्तु यातायात ने उन कृत्रिम अन्तरों को कम कर दिया। थोड़े ही समय में क्योंथली, बघाटी और हिंडूरी इन तीन बोली समूहों का एक सांझा नाम महासुई प्रचलित हुआ। आकाश वाणी शिमला भी अब जिला शिमला और ज़िला सोलन दोनों के संयुक्त कार्यक्रम को महासुई कार्यक्रम का नाम देता है।

महासुई को ठियोग के आसपास प्रचलित अधिक विस्तृत क्षेत्र में समझा जाता है। सिरमौर की तहसील राजगढ़ के पश्चिमी क्षेत्र हाब्बन आदि में भी यह भाषा रूप आसानी से समझा जाता है। इसी तरह ज़िला मण्डी के करसोग के पूर्वी क्षेत्र में भी यह भाषारूप ग्रहणशील है। जिला कुल्लू के औटर सिराज का क्षेत्र सतलुज नदी के आसपास ज़िला शिमला के साथ मिलता है, वहां भी महासुई का ठियोग में प्रचलित रूप समझा जाता है।

सोमसी

दूध और दूध की मलाई का आपस में जैसा सम्बन्ध है वैसा ही सम्बन्ध लोक साहित्य और विशिष्ट साहित्य का है। लोक साहित्य के विविध रूप गीत, कथा, स्वांग आदि विशिष्ट साहित्य की कविता, कहानी और नाटक के आधार रूप होते हैं। महासुई उपभाषा लोक साहित्य में सम्पूर्ण और सम्पन्न है। यहां रामायण की कथा 'सिथा..जी' के नाम से एक दीर्घ गाथा के रूप में प्रचलित है और महाभारत की कथाओं का कथानकों में उत्तरी भारत के प्रामाणिक रामायण और महाभारत ग्रंथों से कुछ विशेष अन्तर है। स्थानीय वीर योद्धाओं की गाथायें हारों के नाम से प्रचलित हैं। शृंगार के संयोग वियोग पक्ष के अनेक गीत नाटियों के नाम से प्रचलित हैं। नाटी का अभिप्राय: नृत और नृत्य से है। कभी कभी इस में नाट्य के तत्व भी शामिल रहते हैं। नाटी में गाए जाने वाले गीत को भी नाटी कह देते हैं, जैसे 'सुमित्रा री नाटी' वाले गीत को। 'झूरी' एक अन्य प्रगेय शैली है।

लोक साहित्य की आधारभूमि पर और समसामयिक समस्याओं के प्रतिपादन के लिए अब महासुई विशिष्ट साहित्य का रूप निखरने लगा है।

विशिष्ट साहित्य के प्रसंग में यह कहना संगत है कि साहित्यिक जागरण की बेला पहाड़ी की सभी उपभाषाओं में एक साथ ही आई। सन् 1942 के आसपास पहाड़ी की उपभाषाओं में राष्ट्रीय भावना और देशभक्ति के गीत लिखे जाने आरम्भ हुए, कांगड़ा में पहाड़ी गांधी बाबा कांशी राम का समय कुछ थोड़ा इससे पहले का है। परन्तु इस पहाड़ी क्षेत्र के अन्य आंचलों में 20वीं शताब्दी में भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के प्रभाव से समूची राष्ट्रीय-भावना के गीत 1942 के आसपास आरम्भ हुए। इससे पूर्व वीर भावना की वारें, हारें झेड़े आदि प्रचुर मात्रा में इन उपभाषाओं में विद्यमान थे, परन्तु उन्हें हम लोक-साहित्य की कोटि में रखते हैं और सन् 1942 के आसपास रचे गए देश भक्ति के गीतों को विशिष्ट साहित्य की श्रेणी में रखते हैं। दोनों में विभाजक रेखा है—रचनाकार की। अर्थात लोक-साहित्य का रचनाकार गुमनाम होता है कि जब कि विशिष्ट साहित्य का रचनाकार सनाम होता है, रचयित्व ही दोनों की परिभाषा का निश्चय करता है।

इसके स्थान यह दृष्टिकोण प्रसारित थे कि प्रदेश की प्रत्येक स्थानीय पहाड़ी बोली को साहित्यिक स्थान ग्रहण करने का अवसर दिया जाए। इस दृष्टिकोण से पहाड़ी की उपभाषाओं को साहित्यिक रूप ग्रहण करने के और अधिक स्पष्ट अवसर मिले। आजकल महासुई उपभाषा के लेखको में प्रसिद्ध है—श्री काहन सिंह जमाल, श्री चेत राम भारद्वाज ललित, श्री भीम दत्त काले, श्री नरेन्द्र सिंह अरुण, श्री जय देव किरण, श्री हरि राम जसटा, श्री केशव शर्मा, श्री रामानन्द आचार्य, श्री रामा नन्द शास्त्री, कुमारी सुमित्रा ठाकुर, कुमारी मीना ठाकुर, श्री लच्छी राम सलीम, श्री विद्या नन्द सरैक, श्री संगत भारती, श्री हरि बल्लभ शास्त्री इत्यादि। नव लेखन के यदि दो स्तर ग्राम्या और महानगरी विसंगतियां समझें जाएं तो महासुई के उपर्युक्त लेखक ग्राम्य में आएंगे। ग्राम्य का अभिप्राय ग्रामीण संस्कृति से है, ग्राम्य दोष से नहीं। अधिकतर लेखकों की रचनाएं विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं और छुट पुट संकलनों में ही छपी हैं; जिन्होंने अपने काव्य संकलन छपवाए हैं, वे हैं:—

श्री काहन सिंह जमाल.........गिरी गंगा री धारो
श्री चेत राम भारद्वाज ललित.........जुएंणों रे आशु
श्री नरेन्द्र सिंह अरुण..............रंग बरंगे फूल
श्री जय देव किरण..........पात्थरो रे माणु

जो रचनाएं हमारे ध्यान में आई हैं उनका विवरण हम इस लेख के अन्त में दे रहे हैं।

प्राप्त रचनाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि श्री हरिराम जसटा समीक्षा और निबन्ध क्षेत्र में अपना स्थान रखते हैं। साहित्यिक विषय की परिपक्वता श्री भीम दत्त काले में प्राप्त है। भावनाओं के चित्रण में श्री ललित और स्थितियों के चित्रण में श्री जमाल उल्लेखनीय है। व्यंग्य में अरुण और बिम्ब-विधान में किरण पसन्द किए जाते हैं। इन कवियों की रचनाएं आकाशवाणी से तो प्रसारित होती ही रहती हैं परन्तु स्कूलों

के युवा वर्ग में इनकी व्याप्ति का कोई निश्चित कार्यक्रम नहीं है। गद्य क्षेत्र में अभी गिने चुने उदाहरण है। आचार्य केशव शर्मा और आचार्य गोकुलानन्द ने कुछ संस्कृत से महासुई अनुवाद किए हैं। भाषा विज्ञान के मानदण्डों के अनुसार इनका विश्लेषण करने की ओर आचार्य रामानन्द की रुचि गई है।

महासुई उपभाषा के साहित्य का लेखा जोखा लेते समय महासुई की ग्राम्य-नाटिकाओं का सन्दर्भ अत्यन्त आवश्यक और महत्वपूर्ण है। हिमाचल प्रदेश के इस आंचल में ग्राम्य रंगमंच के खाते में करियाला और बांठड़ा दो रूप प्रचलित हैं। शिल्प की दृष्टि से इनमें कोई विशेष अन्तर नहीं है। साधारणतय: अन्तर केवल इतना है कि किसी मनौती के पूरा होने पर करियाला किया जाता है और विवाह, शादी आदि खुशी के अवसरों पर बांठड़ा किया जाता है। एक तथ्य यह भी है कि शिमला के पूर्व और उत्तर में करियाला नाम प्रचलित है और पश्चिम और दक्षिण में बांठड़ा नाम प्रचलित है। पिछले वर्ष इन नाट्य-रूपों और हिमाचल के कुछ अन्य नाट्य रूपों का परिष्कार-संस्कार करके हिमाचली रंग मंच के निर्माण का कार्य हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी ने आरम्भ किया और अब साहित्य कला की यह विधा भी प्रगतिपथ पर आई है।

साहित्य में नाटक का स्थान विशेष और विशिष्ट होता है। इस का कारण यह है कि नाटक निरा साहित्य रूप नहीं है। उसमें और भी बहुत से तत्व होते हैं जो उसके अपने हैं। स्थूल रूप में नाटक में दो स्पष्ट पहलू हैं, एक तो यह कि नाटक एक शब्दबद्ध अभिव्यक्ति और दूसरा यह कि नाटक एक अभिनय कला है।

साहित्यिक कृति और अभिनय कला दोनों मिलकर नाटक की धारणा को सम्पन्न करते हैं। नाटक केवल मात्र संवादात्मक रचना नहीं है। नाटक में नाटककार (लेखक), अभिनेता, मंच निदेशक, रंग शिल्पी और दर्शक समूह सभी कारक मिलकर कार्यशील होते हैं। लेखक और अभिनेता का सहयोग प्रत्यक्ष होता है। निर्देशक और रंगशिल्पी सहयोगी होते हैं और दर्शक समूह का सहयोग परोक्ष होता है।

महासुई क्षेत्र में रंग मंच के उत्साही प्रेमी और कार्यकर्त्ता अवश्य है परन्तु उन्होंने हिन्दुस्तानी (हिन्दी, उर्दू) को अपने कार्य का माध्यम बनाया है। ऐसे लोगों ने इस क्षेत्र के लघु नगरों में अपनी छोटी छोटी मण्डलियां बनाई हैं जो मौसमी, शौकिया और अनियमित रूप से कार्य करती रहती हैं। अब कुछ कुछ स्थानीय पहाड़ी भाषा को यत्र-तत्र माध्यम बनाया जा रहा है। नाहन नगर में और राजधानी शिमला में रंग कला का कार्य हिन्दी माध्यम से ही हुआ है। ग्राम्य-क्षेत्रों में रंग कार्य के खाते में 'करियाला' उल्लेखनीय है। करियाला वास्तव में भारत के मध्य कालीन लोक नाट्य के हरिकथा वाले रूप का पहाड़ी संस्करण है। यहां के लोगों ने उसे अपनी आवश्य-कताओं के अनुसार ढाला, कुछ अंश उस परम्परा से लिए, कुछ अपनी परम्परा के रखे और कुछ आधुनिक और तात्का-लिक समस्याओं से प्राप्त किए। आरम्भ में अग्नि के ध्यान, वाद्य यंत्रों के वादन से दर्शकों को निमन्त्रण, फिर साधुओं का स्वांग, चन्द्रावली का दृष्य, तत्पश्चात मेम साहब का स्वांग और गांव के मुख्यिा द्वारा किन्हीं तात्कालिक समस्याओं का उल्लेख, उसी उल्लेख में दर्शकों का प्रत्यक्ष सहयोग और प्रतिवद्धता आदि करियाला के मुख्य लक्षण लोक नाट्य के धरातल पर विभिन्न मिश्रणों के परिणाम हैं। यह 'जातरा' प्रकार का लोक नाट्य है। शिल्प महत्वपूर्ण और प्रभावी है परन्तु इसका परिष्कार नहीं किया गया और इसे महासुई नाटकों के अभिनय के लिये प्रयुक्त भी नहीं किया गया। ग्राम्य-जनता करियाला के देहाती रूप को अपने मनोरंजन के लिए इस्तेमाल कर लेती है। महासुई में साहित्यिक नाटक लिखने की अभी निरन्तर परम्परा नहीं बनी। रेडियो रूपक का रंग कला से सम्बन्ध नहीं। स्कूलों और स्कूलों के टूरनामेंटों में भी महासुई नाटक अभी मंचित होने आरम्भ नहीं हुए। करियाला के शिल्प का कुछ आंशिक प्रयोग हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी द्वारा उत्पादित 'लाटी शरजंग हिनाडण्डव' नृत्य नाटिका में किया गया है परन्तु उसका माध्यम भी हिन्दी है, महासुई नहीं। इस विश्लेषण के आधार पर हम स्पष्ट कह सकते हैं कि महासुई नाटक और महासुई रंग मंच अभी विकसित होने को है। आशा है महासुई कथाकार इस ओर अपेक्षित ध्यान देंगे।

—गांव कवारा, डा0 घर बेबलिया,
कुसुम्पटी, शिमला।

हिन्दी महासुई

तुलनात्मक वाक्यावली

भारत की अखण्ड संस्कृति की अभिव्यक्ति के लिये राष्ट्रीय और प्रादेशिक अध्ययनों का समन्वय आवश्यक है। इसके कई माध्यम हैं। भाषा क्षेत्र में तुलनात्मक वाक्यावली उनमें से एक है। हिमाचल प्रदेश में प्रादेशिक पहाड़ी और राष्ट्र भाषा हिन्दी दोनों का निश्चित क्षेत्रों में प्रचलन है। पहाड़ी भाषा साहित्य क्षेत्र में उभर रही है और राष्ट्र भाषा हिन्दी इस राज्य की राजभाषा होने के नाते प्रशासन में प्रवेश कर रही है।

पहाड़ी भाषा की महासुई, सिरमौरी, कुल्लूई, मण्डियाली, कहलूरी, कांगड़ी, चम्बियाली उप-भाषाएं साहित्यिक स्तर पर भी उजागर हुई हैं और अपने-अपने जनपदों में जमाव भी किए हुए हैं। राज्य सरकार के कर्मचारी इस प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में सेवा निमित्त नियुक्त होते हैं, उन्हें जनपदीय वाक्यावली का कुछ ज्ञान होना चाहिए; पहाड़ी की उप-भाषाओं के लेखकों और साहित्यकारों को भी यहां की अन्य उप-भाषाओं की वाक्यावली की जानकारी होना साहित्यिक दृष्टि से आवश्यक है; इन दो बातों के अतिरिक्त उप-भाषाओं की वाक्यावली निहित व्याकरण के मूलभूत नियमों की अभिव्यक्ति के लिए अनुसन्धाताओं के लिए उपयोगी होती है। इन तीन दृष्टिकोणों से हम हिन्दी-महासुई वाक्यावली के कुछ नमूने अगले पृष्ठों में दे रहे हैं—

हिन्दी	महासुई
1. तुम्हारा क्या नाम है?	तेरो का नांव असौ?
2. तेरा क्या नाम है?	तेरो का नांव असौ?
3. आप के गांव का क्या नाम है?	तूंहौं रै गांव रो का नांव असौ?
4. क्या आप के गांव तक बस जाती है?	का तेरै गांव तौंई बस डेवौ?
5. हां, हमारे गांव तक बस जाती है?	ओ, म्हारै गांव तौंई बस डेवौ।
6. आपके कितने बच्चे हैं?	तूंहौं रे केति बच्चे असौ?
7. मेरे तीन बच्चे हैं। एक लड़की, दो लड़के।	मेरै चिन्न बच्चे असौ। एक छोहटी, दो छोहटू।
8. हमारे हिस्से में दस बीघे जमीन है।	म्हारे हिस्सैं दि दश बीघै जमीन असौ?
9. यही कोई दस क्वींटल।	एह कुछ दश क्वींटल।
10. क्या आप की जमीन को नहर या कूल्ह का पानी लगता है?	तुंहौ री जमीनौ खि का नहर या कूल्हौ रो पानी लागौ?
11. नहीं जी, हमारी जमीन ऊंचाई पर है।	नां जी, म्हारी जमीन ऊंची जागा दी औ।
12. वे मेले कब कब होते हैं?	सै मेलै कबै कबै लागौ?
13. अपने इलाके के विवाह का वर्णन सुनाओ।	आपने इलाकै दै ब्याह गाडरौ रै बारै दो शणाऔ।
14. सर्दियों में आप कौन कौन से कपड़े पहनते हैं? सभी के नाम बताएं।	हिंवंदौ तूहैं केजै केजै कापड़ै पहनौ? बाधै नांव बोल।

15. दो बूढ़े मरद आपस में बातें कर रहे हैं।	दो सैनै आपू बीचै भूषौ लाग्रौ थै।
16. तीन स्त्रियां ऊन कात रही हैं।	चिन्न छेवड़ी ऊन कातै।
17. छोटे परिवार से जीवन सुखी होता है।	छोटे टाबरै जिन्दगी सुखी रौहौ।
18. आपको कौन सी दवाइयां पसंद हैं? देसी या अंग्रेजी।	तूहौ केजी दवाई ढबौ? देशी या अंग्रेजी!
19. थोड़ी और मामूली बीमारी के लिए देसी दवाइयां ठीक रहती हैं।	थोड़ी ओ छोटी बीमारी खि देशी दवाई ठीक रौहों
20. जब बीमारी बहुत बढ़ जाए तो अंग्रेजी दवाइयां ठीक रहती हैं।	जबै बीमारी भौरि बौढ़ौ तैबै अंग्रेजी दवाई ठीक रौहों।
21. आपको यह जुखाम नजला कब से है?	तूहौ एह जुकाम नजला कबौ दो?
22. जुकाम नजले के साथ कुछ बुखार हो जाता है।	जुकाम नजलै संगै कुछ बुखार हुई जाग्रौ।
23. अध्यापक लोग पढ़ाने में बहुत अच्छे हैं।	माशटर आच्छो पढ़ाग्रौ।
24. कल मन्त्री महोदय हमारे गांव में आए थे।	हीजौ मन्त्री जी म्हारै गांव दै आजै थे।
25. उन्होंने अपने भाषण में कहा कि एक महीने में यहां बिजली आ जायेगी।	तीन्है आप्रने भाषणौ दो बोलो तो जै एकि महीनै दि इटिथ बिजलि आजौ लि।
26. पूनम को नींद आई।	पूणमौ नींज आजि।
27. स्त्री को क्रोध आया।	छेवड़ी गुस्सा आजा।
28. चाचा को चोट आई।	काकै ठेम लागि।
29. शत्रु को दण्ड मिला।	दुश्मनौ डण्ड मिला।
30. उसे आदमी की पहचान नहीं।	तेस मांछौ रि पहचान नहीं।
31. उसे जिद के कारण होश नहीं।	तेस जिद रै कारण होश नहीं।
32. बच्चे को बुखार है।	बच्चै बुखार औ।
33. विद्यार्थी को पैनसिल चाहिए।	पढ़ने आलै पैनसिल चैंही।
84. गायों ने दूध दिया।	गावै दुध दीतौ।
35. बैलों ने हल चलाया।	बौल्दै हौल चलेऊवो।
36. बहिन ने किताब पढ़ी।	बौहिनि किताब पढ़ी।
37. कुछ देर बैठिए चाय का एक कप पीजिए।	कुछ देर बोशौ, चाए रो एक कप पीग्रौ।
38. शाम को आओ, हमारे पास ठहरो, सुबह चले जाना।	फीरी आजौ, हांव आगै ठहरौ, झीशी डेवियौ।
39. पैंसिल पच्चीस पैसे में आती है।	पैंसिल पच्चीसौ पैसै खि आजो।
40. पैन चार रुपये में आता है।	पैन चऊ रुपयै खि आजौ।
41. भैंस दो हजार रुपये में आती है।	मौहिश दुई हजारौ रुपयै खि आंजौ।
32. जीवों पर दया करो।	जीवो गाशै दया करौ।
43. नौकरों पर क्रोध मत करो।	नौकरौ गाशै गुस्सा न गाड़ौ।
44. नदी में पानी है।	नौइ दो पानी असौ।
45. पेड़ पर फल है।	पेड़ौ दै फल असौ।
46 पहाड़ की चोटी पर धूप है।	पहाड़ौ री चौंजरी गाशै दो असौ।

47. आप ठीक समय पर पहुंचे।	तूहैं ठीक वक्तौ दै पूजै।
48. बस दस बज कर बीस मिनट पर जाती है।	बस दशौ बाजियौ बीशौ मिनटौ दि डवौ।
49. मैंने यह किताब पांच दिन में पढ़ी।	मौं एह किताब पांचौ देसौ दि पढ़ी।
50. मकान एक साल में तैयार हुआ।	मकान एकि बरशौ दो तैयार हुग्रो।
51. बीमार हो तो डाक्टर से दवाई ले लो।	बीमार औ तौ डाक्टरौ दौ दवाई लेग्रो।
52. नेता में ईमानदारी और हिम्मत हो तो लोग पीछे लगते हैं।	शीरै दि ईमानदारी ओ हिम्मत हुग्रौ तो मांछ पाछै लागौ।
53. अपने में किसी को दोष नहीं दिखता।	आपू दा कौसिदौ मी नहीं दिशदो।
54. सीता ने अपने को दोष दिया।	सीता आपनी गल्ती मानी।
55. मेरी अपनी पसन्द है।	मेरी आपनी पसंद असौ।
56. मैं किसी का नौकर नहीं।	आं कौसरा नोकर नहीं।
57. आप मेरे साथ ऐसी बात मत करें।	तूहै मूं संतै एहरि बात न करौ।
58. आप बहुत झूठ बोलते हैं।	तूहै हद झूट बोलौ।
59. उसका कुछ खो गया है।	तेसरो का खोऊग्रो।
60. दूध में कुछ पड़ गया है।	दुधौ दो कुछ पड़ो औ।
61. कोई आ रहा है।	कुणहै आजि लागा औ।
62. आज कोई नहीं आया।	आज कुणै नही आजा।
63. जब कभी मैं उनके पास जाऊं मुझे झिड़कियां पड़ती हैं।	जबै कबै आं तीनौ आगै डेवू, मुखै झिड़की की पड़ौ।
64. कभी तो कह दिया करो कि मैंने परिश्रम से कार्य किया है।	कभी तौ बोलनो जै मौं मिहनतै काम कीग्रौ औ।
65. न ही किसी को ज्यादा झिड़को और न ही किसी को सेर पर बिठाओ।	न कौसि जादै झिड़कौ ओ न कौसि मूंडो बाशे बशैलौ।
66. क्या सुन्दर दृष्य है?	केहरा चौजो शे दीशौ।
67. क्या पागल आदमी है?	का पागल मांछ असौ।
68. क्या मूर्ख महिला है।	का बेवकूफ़ औरत असौ।
69. बच्चा क्या है, गुलाब का फूल है।	छोहटू का असौ, गुलाबो रो फूलड़ असौ।
60. यह पड़ी है तुम्हारी किताब।	एजि पड़ि ओ तूहौं रि किताब।
71. आपने आप ही मुझे बुलाया और आप ही बोलना बन्द कर दिया।	तूहै आफि आं बोदा और आपू ही बोलदै भाजे।
72. कोई-कोई स्वार्थी होते हैं, समझते हैं यह संसार हमारी खातिर बना है।	कुणहे कुणहे खुदगर्ज हुग्री, सें समझौ जे एह दुनिया तीन्हौ खातर असौ।
73. आपने कुछ का कुछ समझ लिया और कुछ का कुछ हो गया।	तौं का दौ का समझो ओ का दौ का हुग्रो।
74. कोई अच्छा है कोई बुरा है।	कुणहे आच्छा औ कुणहे बुरा।
75. कोई आ रहा है कोई जा रहा है।	कुणहे आजि लागा औ, कुणहे डेवि लागा औ।
76. दोस्तियां बदलती हैं, दो दिन किसी के साथ तीन दिन किसी और के साथ।	साथौ बदलौ, दो देसौ कौसि संगै, चैं देसौ कौसि संगे।
77. मुझे सब कुछ मालूम है।	मुखै सारा पता औ।

78. आपको कुछ मालूम नहीं।	ताखै कुछ पता नहीं।
79. एक तालाब में दो मेंढक रहते थे।	एकि डिबिरि (कुफरि) दै दो मैंडकै रौह थै।
80. दो प्राणी उस तालाब के किनारे आ कर बैठे।	दो झौणै तेस डिबिरि आगै आजियौ बोशै।
81. वे दो मेंढक इकट्ठे रहते ऊब गये थे।	सै दो मैंढकै कऊढे रौहन्दै रौहन्दै शान्दिवि गोए थै।
82. उन्हें अब नवीनता की इच्छा हुई।	तीन्हौ एबै नवउडौ चैंहि तो।
83. उन्होंने उन दो प्राणियों को दौड़ कर अपने साथ मिला लिया।	तीन्है सै दोनै झौणै दौड़ियौ आपू संगै मलाऊए।
84. परन्तु उनके उद्देश्य अलग-अलग थे।	पर तीन्हौ रै मतलब लैंदै लैंदै थै।
85. वे दो प्राणी उन मेंढकों में मिल कर मेंढक बन गये।	सै दोनै झौणै मिडकै बीचै मिलियौ मिडकै बनै।
86. मुझे अपना काम अच्छा लगता है।	मूं आपनो काम आच्छो लागो।
87. मुझ से अपना काम नहीं होता।	मेरे आपनो काम नहीं कौरीदो।
88. उसके घर के चारों ओर घना जंगल है।	तेसरै घौरौ फेरदै घनौ जंगल असौ।
89. उसके गांव में अकाल पड़ गया है।	तेसरै गांव दा कालु पौड़ा।
90. हरियाली मन को मोह लेती है।	हरियालीयै मन मोहि लौवा।
91. कुत्ता भी दुत्कारने पर दुम नहीं हिलाता।	कुक्कर भि फटकरियौ पुंजड़े नहीं हिलावंदा।
92. हमें अपने माता पिता की सेवा करनी चाहिए।	आंव अपने माओ-बापौ रि सेवा करनी चैंहि।
93. छोटा परिवार सुखदायी होता है।	छोटा टाब्बर सुख देओ।
94. उसने जीवन भर देश की सेवा की।	तिनै सारी जिन्दगी देशौ रि सेवा की।
95. अतिथि का सत्कार करो।	पाहुणै री इज्जत करौ।
96. दशहरा और दिवाली हमारे प्रसिद्ध त्यौहार हैं।	दशैहरा ओ दैवली म्हारे बड़े मानै दौ त्वहार असौ।
97. बैल और गाए पवित्र पशु हैं।	बौलद ओ गाओ म्हारै पूजने जोगे पशू असौ।
98. आप मुझे अपना फोटो भेजिए और पत्र मिलते ही उत्तर दीजिए।	तूहें मूखै आपनो फोटो भेजौ ओ चिट्ठि मिलदें ही जवाब दिणा।
99. कपड़े धो कर धूप में सुखाइए।	कापड़ै धोइयौ दौइ दै शुकौ।
100. मैं पहाड़ी भाषा जानता हूं।	आं पहाड़ी भाषा जाणू।
101. क्या आप यह भाषा बोल सकते हैं?	का तूंहै भि ऐह भाषा बोलि सकौ?
102. हां, मैं यह भाषा भली प्रकार बोल लेता हूं।	ओ, आं ऐह भाषा अच्छी तरह बोलि सकू।
103. आप क्या काम करते हैं?	तूंहै का काम कौरौ?
104. यह बड़ा सुन्दर शहर है; यहां मकानों का किराया भी सस्ता है।	ऐह बड़ो चौंजौ रो शहर असौ, इत्था मकानौ रा किराया भी सस्ता (कम) असौ।
105. माधव और सुन्दर दोनो सगे भाई हैं परन्तु धीरज उनका सौतेला भाई है।	माधौ ओ सुन्दर दोनै सोरै भाई असौ पर धीरज तीन्हौ रा सकोबड़ू भाई असौ।
106. खेत में हल चला कर मिट्टी को नरम कर लो।	खेचौ दो हौंलु चलाइयौ माटा नरम करौ।
107. तुम बाजार हो आओ।	तूंहें बाजारौ दौ हुइयौ आजो।
108. वह पूरी किताब पढ़ गया।	तीनै बादि किताब पढ़ि।
109. बच्चा रो उठा।	छोहटू (लोकड़ू) रुणो।

110. उसे तंग न करो, नहीं तो रूठ बैठेगी।	तेस मछरैओ न, ना त्तौक रूषौ ला।
111. मुझ से जो बन पड़ा मैंने अच्छा किया।	मूंदौ जो बनि सकौ, मौं आपू दौ आच्छो कियो।
112. उसने छोटा पेड़ काट डाला।	तिनै छोटा पेड़ काटियां पाड़ा।
113. तुमने यह क्या लिख मारा?	तौं ऐह का लिखौ?
114. मैंने पत्र लिख रखा है।	मौं चिट्ठी लिखि छाड़ीओ।
115. वह आपसे खेलना चाहता है।	सै तूंहौं संगै खेलनो चांहो।
116. हम बरसों से यहीं रहते आए हैं।	ऐंह बरशौ दौ इत्थैही रौही लागै ऊ।
117. मुझ से वहां जाते नहीं बनता।	मेरे नहीं बै तैतै डेवीन्दे।
118. ध्यान से पढ़ा करो।	धैनै पढ़नो।
129. देख कर चला करो।	देखियौ हांडणै।
120. मैं आपका काम अभी किए देता हूं।	आं तंहौ रो काम एभी करू।
121. उसे एक पुरानी बात याद आई।	तेस एक परैणी बात आद आजि।
122. पढ़ना आरम्भ करो, गुस्सा क्षमा करो।	पढ़नो शुरू करौ, रोषौरि दें माफी।
123. उसे भिखारी पर दया आई।	तेस मागणै आलै गाशै घीण आजि।
124. अंधेरे में कुछ दिखाई नहीं पड़ता।	न्हेरै दो कीछै नी दीशदो।
125. शोर में कुछ सुनाई नहीं पड़ता।	हालै दो कीछे भी नहीं शूणीदो।
126. हो सकता है कि कहीं वर्षा हुई हो।	हुई सकौ जै कोठि बरखा हुई औ।
127. वर्षा न होगी तो फसल सूखेगी ही।	जै बरखा न हौलि तै फसल शुकदि औ।
128. तुम्हें इससे क्या मतलब?	तूहौं इन्दौ का मतलब?
129. मैं अपने मित्र से मिलने आया हूं न कि तुमसे।	आं आपनै साथी दौ मिलदा आजा ऊ न के तांदौ।
130. जाने भी दो, रहने भी दो, इतना झूठ क्यों?	जानि दे, रौहनि दे, एतनो झूठ कैंई?
131. वह रात भर काम करता है।	सै सारी राति काम कौरौ।
132. तुम दिन भर कहां रहे?	सारै देसौ तू कोठा रौहा?
138. अब आप पर मुझे रत्ती भर विश्वास नहीं।	एबै मूं नहीं तां गाशै एति भी विश्वास।
134. नदी का पानी कुछ-कुछ घट गया है।	नदी रो पानी कुछ घटि गो औ।
135. मेरी सब बातें गलत समझीं गईं।	मेरी सारी बातौ गलत समझी।
136. मैं अपना सा मुंह लेकर रह गया।	आं पता रवियौ चुपा रौहा।
137. आप सदा प्रसन्न दिखे।	तंहै सदा खुश दीशैं चैंही।
138. आप सदा प्रसन्न रहें।	तूंहै सदा खुश चैंही रौहै।
139. मैं तुमसे कह रहा हूं।	मौं ताखै बोलि लाओ औ।
140. चलिए हम वहां जाकर बैठें।	चालौ ऐंह तैथै बोशौ मि।
141. आप यहीं बैठे रहिए, हम ज़रा अपने मित्र से मिल आते हैं।	तूंहै इत्थै ही बौठे रौह, ऐंह जरा आपणै दोस्तौ दो मिलि आजौ मि।
142. आपको इतना तंग दिल नहीं होना चाहिए।	तंहै एतना तंगदिल न हुणै चैंही।
143. अब वह पेड़ नहीं है।	एबे सै पेड़ नहीं।
144. कल वर्षा नहीं हुई।	हीजौ बरखा नहीं हुई।
145. हर समय हर किसी पर संदेह नहीं करते रहना चाहिए।	हर घड़ी हर मांखौ गाशै शक न करदै रहना चैंही।
146. मैं उसकी इस बात पर विश्वास नहीं करता।	आं तेसरी एजि बातौ गाशै विश्वास नहीं कौरदा।

147. इस बात को मानना ठीक नहीं ।	एजि बात मानने ठीक नहीं ।
148. दो रोटियां और ले आओ ।	दो रोटी तौई आण ।
149. जाने वाले आदमी को मैं रोकना नहीं चाहता ।	डेवणै आले मांछौ ओ रोकनै नहीं चांहदा ।
150. अगर वह जाना चाहे तो जाने दो ।	जै सै डेवणो चांहौ तौ डेवणि दे ।
151. किसान इस खेत में धान बोएगा ।	किसान एस खेचौं दो धान बोऔ ला ।
152. हमने सारी बात समझ ली, गल्ती सुधार ली और पीछे हट गोए ।	ऐंह सारी बात समझि गोई औ, गल्ती सुधारी गोई, ओ पाछे हटे ।
153. पत्थरों को फेंक दिया जाये ।	ढोल पाड़ो ।
154. मकानों को गिरा दिया जाये ।	घौरौ डालौ ।
155. कल रात को तुम क्या कर रहे थे ?	हीजौ राति तू का कौरै था ?
156. कल दिन में आप क्या कर रहे थे ?	हींजौ देसौ तूहें का कौरौ थे ?
157. तुम्हें हमसे क्या मतलब !	तंहौं आंव दौ का मतलब ?
158. यह घोड़ा नहीं चलता ।	ऐह घोड़ा नहीं चालदा ।
159. मैं बाजार नहीं जाता ।	आं बाजारौ खि नहीं डेवंदा ।
160. वर्षा न होगी तो फसल सूखेगी ही ।	जै बरखा न होलि तबै फसल शुकदि ही औ ।
161. उसके पास बहुत पैसा है ।	तेसखै बहुता पैसा असौ ।
162. गाड़ी आई और हम चढ़े ।	गाड़ी आजि ओ ऐंह चौढ़े ।
163. प्रजा ने राम को राजा बनाया ।	प्रजै राम राजा टैउआ ।
164. हमने रणजीत को नौकर रखा ।	ऐंह रणजीत नोकर छाड़ा ।
165. बच्चे को दवा पीनी पड़ेगी ।	बच्चे दवाई पीनी जाली ।
166. मोहन को पागल कहा गया ।	मोहनै खि पागल बोला ।
167. मकान को झोंपड़ी माना गया ।	घौर झोंपड़ी समझी ।
168. मीना और आशा चली गई ।	मीना ओ आशा डेवी गोई ।
169 राज और नरेन्द्र आये हैं ।	राज ओ नरेन्द्र आजे ।
170. मां ने बूढ़े नोकर को पांच रुपये दिये ।	मावै बुड्डे नोकरौ पांज रुपये दीते ।
171. लोटा और थाली मेज पर है ।	लोटा ओ थाली मेजौ गाश असौ ।
172. पतीला और परात रसोई में है ।	पतीला ओ परात खाणौ आलै घौरौ दो औ ।
173. फल और मिठाइयां अलमारी में हैं ।	फलौ ओ मिट्ठाई अलमारी दे औ ।
174. आटा और दालें स्टोर में हैं ।	आटा ओ दाल स्टोरौ दे औ ।
175. बहिन, देवरानी, ननद कल हमारे घर आई ।	बहिन, देवरानी, हीजौ म्हारे घौरै आजि ।
176. भाई के साले का भतीजा बीमार है ।	भाई रै सालै रा भतीजा बीमार औ ।
177. उसकी बुआ की लड़की का घर वाला एक बड़ा अफसर है ।	तीसौ री बुऐ री छोहटी रा घर वाला एक बड़ा अफसर असौ ।
178 कोटखाई-कोटगढ़ के सेब और ऊना-दून का गन्ना मशहूर है ।	कोटखाई-कोटगढ़ के सेब ओ ऊना-दून रै गन्ने मशहूर औं ।
179. कुल्लू के शाल और चम्बा की चूड़ियां मशहूर हैं ।	कुल्लू रै शाल ओ चम्बे री चूड़ी मशहूर असौ ।

180. रोहड़ू के पास पब्बर बहती है और भरमौर के पास बड्ढल ।	रोहड़ू नेड़ी पब्बर बौह ओ भरमौरौ नेड़ी बड्हल ।
181. तारादेवी की पहाड़ी के नीचे और श्यामला सड़क के किनारे छोटे छोटे खेतों में गोभी के फूल खिले हैं ।	तारादेवी रै ढाकौ नीठे ओ श्यामला नौ रै कनारें न्हान्दे न्हान्दे (या छोटे छोटे) खेचौ दे गोभी रे फूलौं खिल दौ ।
182. वह दूर देखो बहुत दूर एक चबूतरे की तरह पहाड़ी सी उभरी है और पास में एक चोकोर घर है ।	दूरे बहुत दूरे एक चबूतरे न्होरा ढाक ज्यों दीशौ ओ नेड़ी एक चौकोर घौर असौ ।
183. उन खेतों के दांई तरफ एक पानी का छोटा नाला है और साथ में चार सौ फुट ऊंची पहाड़ी है, उसके ऊपर सड़क है और सड़क के ऊपर फिर पहाड़ी है ।	तीनौं खेचौं रे दांवी दिशिको पानी रा एक छोटा नालु असौ ओ साथि चार शौ फुट ऊंचो ढाक असौ, तैंई गाशे शड़ीक असौ ओ शड़िकि गाशे तौंई ढाक असौ ।
184. पहाड़ के लोग भोले तो जरूर होते हैं, परन्तु किसी से धोखा नहीं खाते ।	पहाड़ौं रे लोग भोलै तौ जरूर हुऔ, पर कौसि दौ धोखा नहीं खांदे ।
185. खाना, पीना, पहनना, गाना, नाचना, खेलना और थकने पर सो जाना यही बचपन है ।	खानो, पीनो, वामणो, गानो, नाचनो, खेलनो ओ शांदियौं सूतनै ऐह ही बचपन असौं ।
186. बेहतरीन इन्सान वह है, जब उसकी प्रशंसा की जाये, तो वह शर्मिंदा हो और जब उसकी बुराई की जाये तो वह खामोश रहे ।	सभी तौ आच्छा मांठ सै औ, जबै तेस खै शंघवी, तौ सै सरमियौ, ओ जबै तेस खै भांडवी तौ सै चूपा रौह ।
187. शैतान से डरना परमात्मा पर संदेह करने की एक एक स्थिति है ।	रींडौ दौ डरने भगवानौ दौ शक करने री एक दशा असौ ।
188. कोई सच्चा आदमी ही सच्चे आदमी को सच्चा समझ सकता है ।	कुणहै सच्चा मांठ ही सच्चे मांठौ खि सच्चा समझि सकौ ।
189. बसन्त की आमद ने सर्दी के कपड़ों को लपेट कर ट्रंको में बंद कर दिया ।	बसंतौ रै आजियौ हिवदौ रै झुड़के लपेटियौ ट्रंकौ दै बंद कीयैं ।
190. झरने का पानी बड़ी बड़ी चट्टानों के मध्य में नृत्य कर रहा है और खुशी के गीत गा रहा है ।	झरनै रो पानी बड़े बड़े ढोलौं बीचैं नाचि लागि औं ओ हासि खेलियौ गीत गाऔ ।
191. आओ, प्रकृति के इस दान से अपनी झोली भर लें । आसमान को अपनी चादर बनाये और नरम नरम घास पर सिर रखकर आराम करें ।	आजौ, कुदरतौ रै एस दानै गिन्है आपना बसता भौरौ मि । सगौं आपनि चादर बनाबियौ ओ नरम नरम घासौ गाशै मूंड रैंह वियौ आराम कौरौ मि ।
192. दूसरों को साधन बनाकर मशहूर होना मिट्टी में मिल जाने के बराबर है ।	दूजै री पीठियैं नांव कमावनो माटै दो मिलनै बराबर असौ ।
193. ऐ इन्सान के दिल, औरत तेरी अपनी छाया है, जो कुछ तू है, औरत भी वही है ।	ऐ मांठौ रा जीबू, छेवड़ी तेरी छांई असौ, जो कुछ तू ऐ छेवड़ी भी सै ही औ ।

194. शाही महल के सामने हजारों आदमी इकट्ठे हुए थे। उन सब की नजरें महल की बालकनी की तरफ लगी थी। चेहरों से बहुत ज्यादा खुशी प्रकट हो रही थी। नगारे पर चोट पड़ी।	बादशाहों रे महलो आगे हजारों आदमी इकठे हुंदे थिए तैनों सभी री झैठी (नजरो) बेड़े री चकड़ी री दा लागी हुंदी थी। चेहरे दू बड़े भारी खुशे झलके लागे थिए। नगारे गाशौ चोट पड़े।
195. उस समूह में हलचल मच गई।	तेस टालरौ दे हलचल माचे गोए।
196. हर व्यक्ति उचक उचक कर बालकनी की तरफ देखने लगा।	हरेक मांछ फानी तलाश्र तलाश्र श्रौ चकड़ी री दा देखदा लागा।
197. चौबदारों ने ऐलान किया कि महाराज अधिराज बादशाह सलामत अभी दर्शन देने के लिए सामने आएंगे।	माहतें ऐलान किथा कि महाराज अधिराज बादशाह सलामत हेवी मुंह दखाई (दर्शनौ) खे समखे श्राओ श्रौ।
198. हर व्यक्ति अपनीअपनी जगह पर जम कर खड़ा हो गया।	हरेक माणुष आपणी आपणी जागे दा टिकेश्रौ ख हौए गोश्रा।
199. बालकनी के आधे हिस्से पर जो पर्दा लगा था, वह हिला, बादशाह सलामत जिंदाबाद के नारे लगे।	तंगौ रे आधे हिस्से गारौ जु पड़दा लागा थिश्रा, हिलका (हिला), बादशाह सलामत जिंदाबाद नारे लागे।
200. बालकनी के ऊपर आकर, बादशाह सलामत ने मुस्कराते हुए अन्दाज में जनता पर एक नजर डाली और खामोश रहने का इशारा किया।	बालकनी (चकंड़ी) गाश श्राजे श्रौर बादशाह सलाम मुस्कुऐ हसणे रे हाश्रौ भाश्रौ दूर्शाए श्रौ जनता गाश ए नजर फेरे श्रो चुप रहण रे सावने दिते।
201. जनता की वह भीड़ एक दम पत्थरों, पेड़ों सी निश्चल हो गई। अब बादशाह ने जनता को सम्बोधित किया,	जनता रे से भीड़ शह पट्ट ढोलौ रूखो न्होरे चुपचा होए गोए। ऐबे बादशाहे जनता साबे भुशौ लाइ शुरू की :
202. मेरी प्यारी प्रजा—	मेरी प्यारी परजा —
203. मेरा खानदान एक बड़ा खानदान है, अतीत में इसने बड़े महान शासक पैदा किए हैं।	मेरा वंश एक बड़ा वंश सौ, पाछुऐ जमाने दे ऐ बड़े हुकमरान पैदा किऐ श्रौ।
204. मेरा बच्चा भी इसी परम्परा को आगे बढ़ाएगा।	मेरा छोहटा (छोटा) भी इयौंहीं रीतौ आगू बढ़ाऊ श्रौ।
205. अब इस देश का भविष्य मेरे इस बच्चे के साथ बंधा है।	ऐबे ऐस देशौ रा आगला सौमां मेरे ऐंस छोहटू (छोटू) साथे जुड़ा हुंदा अस्सौ।
206. मेरी प्यारी प्रजा, अब जाओ और खुशी के गीत गाओ।	मेरी प्यारी परजा ऐबे डैश्रो श्रो खुशी रे गीतौ गाश्रौ
207. आकाश के देवता खुशियां मनाने वालों की मूर्खता पर हंसने लगे।	कांशौ रे देश्रौ (देवतौ) खुशी मनाउणे श्राले री मुरखा हसदे लागे।
208. जिस रात उस नए शासक के राज्याभिषेक की खुशियां मनाई जा रही थीं, ठीक उसी रात उस नगर में एक और बच्चे का जन्म हुआ।	जिश्रौ राते तस नऐ हुक्मरानौ रे राजगदी गारौ बोठण री खुशी मणाई लागी थियी, ठीक सजी ही राते तेस नगरौ दा एक रके छोहटु रा जलम हौश्रा।
209. उस बच्चे की मां कई दिनों से भूखी थी, वह बीमार थी, वह बहुत कमजोर थी।	तेस छोहटू री मां कई देसौ दू भूखे श्रौरौ थिए, से ठौंरे (ठौंहरे) हुंदे सौ थिए, से भरी माड़े फिरे हुंदे थिए।
210. उसने एक पुराने खण्डहर में उस बच्चे को जन्म दिया था।	तिऐं एकी पराणे उंजडे हुंदे घराहचौ (घराचौ) दा तैस छोटू जलम दित्ता थिया।
211. वह घोर निराशा से नन्हे से बच्चे की ओर देख रही थी।	से बिल्कुल नराश होएश्रौ तैस छोटू री दाऽ देखदे लागे हुंदे थिए।
212. इस महिला का पति युद्ध में बादशाह सलामत की तरफ से लड़ता हुआ मारा गया था।	इयौं छेउड़ी रा कंत (घरवाला) जुझौं दा बादशाह सलामतौ री दाऽ दू जुझदे जुझदे झांगिया (मारा गोश्रा) थिश्रा।
213. महिला अकेली रह गई थी	छेउड़े ऐकले रौए गोए थिए।
214. प्रभु ने उसे यह साथी दे दिया।	ईशरे तिश्रौं ऐजा माढडा (छोटा) जंश्रा साथे देऽ हैड़ा था।
215. उसे अपने पति की याद आई, उसकी आखों से आंसू बहने लगे।	तिश्रौ आपणे कंतौ रे याद आजे (तिश्रौ आपणा कंत चिताइंदा लागा, तिश्रौंरी आखे दू आशू बौंदे (बंहदे) लागे।
216. वे आंसू उस बच्चे के उस नए शरीर को धोकर पवित्र कर रहे थे।	से आशू तैस छोहटू (छोटू) रे नए जिस्म धोश्रौ पवित्तर कर लाऽ थिया।
217. मां भूखी थी, बच्चे से कहने लगी, देवलोक का अपना प्यारा घर छोड़कर मुझ भूखी की गोद में क्यों आया ?	मां भुखे असौ थे, छोटू खे बोलदे लागे-देवलोकौ रो आपणो प्यारो घर छोड़ेश्रौ मुं भूखी री ध्याले दो केई आजो ?
218. देवताओं का वह सुख भरा लोक त्याग कर तू इस मातलोक में क्यों आया, यहां तो दुःख है, दर्द है, अत्याचार है, भूख है, धोखा है, झूठ है।	देश्रौ रा से सुखौ भरा लोक छोड़ेश्रौ तू मातलोकौ दो केई आजो, इथे तो दुख (वेरु) असौ, डाश्रौ असौ, अत्याचार असौ, भूख असौ, धोखा असौ, खोटी (झूठ) असौ।

219. यहां कोई किसी पर दया नहीं करता, सब स्वार्थी हैं, स्वार्थ पूरा हुआ नहीं कि मुंह पर सरे आम थूक देते हैं।

इथे कोए कसी गाशै घीण नी करदा, बादै आपस्याथे असो, स्यार्थे पूरा हौआ नहीं कि सभी समखो मुंहौ गारौ थुकौ औं।

220. मैं आंसुओं के सिवाए तुझे कुछ नहीं दे सकती। मेरी नंगी और सर्दी से ठिठुरती ये बाहें तुझे कुछ गर्मी नहीं दे पाएंगी।

हांउ तांअ आशू रै स्वाऐ कुछ नी देअ सकदे। मेरी ए नांगी ओ शेलै श्लाफूर्दी बाऔ तांअ कुछ न्यात नी दै पाऔ ली।

221. तुझे पहनाने के लिये मेरे कपड़े नहीं है। मेरे जिगर के टुकड़े मेरे पास तेरे लिए कुछ नहीं, केवल यह है नंगा, ठिठुरता, शक्तिहीन और बीमार जिस्म।

तांखै भिडाउणै खै मु कौंऐ झुड़कै भी नी। आंथी मेरे जिऊ रै टुकड़े, मुं कौंऐ तांखे कुछ भी नी आंथी, ब ए असौ नांगा श्लातिथा हुंदा निहांगा ओ चैंतोग जिसम

222. मां ने बच्चे को अपने सीने से चिपका लिया और उसे स्वयं को बुखार आ गया उसने बुखार से जलती आंखे खोली, ऊपर निगाहें करके वह बुदबुदाई––

माऐ छो:टू हिए साथै छोड़े हेड़ो ओ तियौ आपू ठणक आजा। तियै ठंणके गिने (करे) जलदी आपणी आं खोली (ध्याड़ी) उबे खे झेठ करे औं से बडवडाणे लगी

223. "मेरे ईश्वर मुझ बदनसीब पर दया कर।"

"मेरे इशरा, मं कभागी गाशे घीण कर"

224. उसने देखा गहरे काले बादल चांद के चेहरे से हट गए हैं, अब चांद की किरणे इस खण्डहर पर भी पड़ने लगीं जहां वह मां अपने उस बच्चे को अपनी छाती से चिपका कर बैठी थी।

तिंऐ देखो डुंगे (घणे) काले (जुड्णो) बादलौ जुस्ं रै मुंहटू दू हटे (टिकी) गोए औं, ऐबै जुएणौ री शुओं (सूरज चांद की किरणे झांऔं) ऐस घरा:चौ (घराहचौ) गाशै भी पड़दी लागी जैथे से माऽ आपणै तंस छोटू आपणै हियै साथै चपका अओ बोठे हंदे थिए।

—हरिराम जसट

तुलनात्मक वाक्य अध्ययन

क्रमांक 1	हिन्दी 2	शिमला के आसपास 3	चौपाल के आसपास 4	सोलन के आसपास 5	कोटगढ़ के आसपास 6	रोहड़ू के आसपास 7
1.	उसके घर के चारों ओर घना जंगल है।	तेसरे घौरो रे चऊ कनारे घोणों जंगल असो।	तेसरै घरौ फेरदो घणौ जांगल असो।	तेसरे घरारे चऊ कनारे घणा जंगल असो।	तेसरै घौरे फेरदै घाणों जांगल आसा। जांगल आसा।	तेहरा घोरा फेंदनी घोणों जांगल आसीत।
2.	उसके गांव में अकाल पड़ गया है।	तेसरै गांव दा काल पौड़ि गोआ	तेसरै गाओ दा काल पड़ गौआ औ।	तेसरे गौंव दा काल पड़ गोआ।	तेसर गौं दी काल पौड़ि गौ नौ।	तेहरा गावां दे काल पोडेगो।
3.	हरियाली मन को मोह लेती है।	हरयाली मन मोईदेओ	हरयावल जिऊ मोहौ।	हरयाली मनाखे मोई लो।	हरियाली मौनान मोहा	हौराले जीऊ मोहा
4.	कुत्ता भी दुत्कारने पर दुम नहीं हिलाता।	कुक्कर भी झिड़की रौ पुजड़ी नी हिलाऊदों	कुकुर भी झिड़कऔ पुजड़ नी टिलकांवदों	कुत्ता भी फटकारती पांदे पुंजटी नई हिलांदों	कूकर बी झिड़कियो पूजड़ी नी हिलोदों।	ककुर वी दतकारना गाए पेजड़ नहीं हिलाऊदों।
5.	हमें अपने माता पिता की सेवा करनी चाहिए।	हामों आपणे मां बाओ री सेवा करनी चेई।	हमौ आपणे इजि बाब री टहल करण चांई।	हामाखे आपणे मां बाबा री सेवा करनी चई।	हाम आपणे माओ बाबा री सेवा करनी चाहीं।	आमु आपणा मां और बाबा रे सेवा चांई कोरणे।
6.	छोटा परिवार सुखदायी होता है।	छोटा टावर सुखी ओ।	छोटा टावरा सुखी हुऔ।	छोटड़ा टाब्बर सुखे देणे वाला हो।	छोटा टावर सुखी टावर।	छोटा पोरिबार सुखा के होआ।
7.	जीओ और जीने दो।	जीऔ और जीवणी देओ।	जिऔ ओ जिउण देओ	जीओ ओ जीवणे देऔ	जीऔ औ जीना देओ	आपु बी जीऊ ओरी वीं दे जीऊणा।
8.	उसके दांत, आंखे, बाल, हाथ और पैर बहुत सुन्दर हैं।	तेसरे दांद, आंखी, बाल, हाथ और लात बड़े मजे रे असो।	तेसरे दांद, आंख, हाथ ओ लात बांठिऐ असौ।	तेसरे दांद आखी बाल, हाथ और लात बड़े सोणे असो।	बौड़े बांके आसा तेसरे दांद, आंखी, बाल, हत्थ और पैर।	तेहरा दांद आंखी, बाल, हाथ लात और बाठणां ए।

क्रमांक 1	हिन्दी 2	शिमला के आसपास 3	चौपाल के आसपास 4	सोलन के आसपास 5	कोटगढ़ के आसपास 6	रोहड़ू के आसपास 7
9.	वे चार भाई और तीन बहिनें हैं।	से चार भाई औरतीन बहणी असो।	से चार भाउ और चीन बहुण् असो।	से चार भइड़ और तीन बैणी असो।	सैं चार भाई औ चौन बौणि आसा।	से चार भाई और चिन बोहणी ए।
10.	उसने जीवन भर देश की सेवा की।	तिनिए सारी उम्र देशौ री सेवा की।	तिने पेरी उमर देशौ री सेवा किम्।	तीणियें सारी बारी देशा री सेवा कीं।	वादी उमरि सौ देशो रि सेवा करदौ रौ।	तिणिया सारी उमरी दे देशा रे सेवा किए।
11.	अतिथि का सत्कार करो।	पाउणे री खातर करो	पाहुण र् आदर खातर करौ।	पावणे रा आदर करौ।	पाहुणो री आदर खातर करौ।	पाऊणा रे सेवा करो।
12.	दशहरा और दिवाली हमारे प्रसिद्ध त्यौहार हैं।	दशौरा और दवाली म्हारे मशहूर तवार असो।	दशहरा ओ दिवाली म्हारे मशहूर त्योहार असौ।	दशोरा रो दवाली म्हारे मशूर त्वाहर असो।	दशौरा और दिवाले म्हारे बौडे त्यौहार आसा।	दशहरो और दिवाले म्हारे सभी कु बोडो साजो आसति।
13.	क्या आप छुट्टी जा रहे हैं?	क्या तुसे छुट्टी चाली रोवे।	का तुओं छुट्टो डेग्र् लागे औ?	का तुमे छुट्टी चाल रोए?	छुटि चाले ने तुम।	का तुमां छुट्टी गाए डेह्दे लागा होंदा।
14.	क्यों?	कवे?	कई?	कवे?	किलें?	केऊरवे?
15.	नहीं, दफ्तर जा रहा हूं।	ना, दफतर के चाली रा।	ना दफतरी खे डेओ लागा ऊ (थाडेऊ)	नइ दफतराखे चाल रोआ।	ना मं चालौ नो दौफतरा ले।	नोआ दफतरा बे डेऊ।
16.	हां, घर जा रहा हूं।	आहो, घौरो के चाली रा।	ओ घर डेऊ लागा ऊ।	हां घराखे चाल रोआ।	ओ घौर डेऊ या घौरे डयोंदो लागो नो।	ओ, घोरा डेऊ।
17.	बैल और गाए पवित्र पशु हैं।	बौल्द और गाव पवित्र पशु ओ।	बलद ओ गाओ पवितर पशु असो!।	बोलदो रो गाव शुद्ध पशु असौ।	बौल्द गाओ पवितर पोशु आसा।	बोलद और गाओ पोवित्र गोरू आसति
18.	आप मुझे अपना फोटो भेजिए और पत्र मिलते ही उत्तर दीजिए।	तुसे माखे आपणा फोटू भेजो और चिठी मिलदे ही जवाब देओ।	तुए मुखे आपणो फोटू डयालियो ओ चिठी भेंटदे ही जवाब देइयौ	तुमे माखें आपणा फोटू भेजो रो चिठी मिल देईउत्तर देयो।	तुम आपणों फोटू मुल्ह भेजौ ओ चिठी मिलदे ई जवाबे देओ।	तुमां मूखे आपणो फोटू भेजो तोई चिठे मिलद्धिया ही जवाब दइयों।
19.	कपड़े धोकर धूप में सुखाइए।	टालें घोई री दौं दे शुकाओ।	झुड़के धोअओ दौ दे शुकादओ।	टाले धोइ रो दौंआ दे शकायो।	जूड़के धोइयो दौं दे शुकाओ।	जुड़का धोइयो स्वी। का शुकाओ।

क्रमांक 1	हिन्दी 2	शिमला के आसपास 3	चोपाल के आसपास 4	सोलन के आसपास 5	कोटगढ़ के आसपास 6	रोहड़ू के आसपास 7
20.	मैं पहाड़ी भाषा जानता हूं।	आंऊ पहाड़ी बोली जाणू।	हांओ पहाड़ी बोली जाणू।	हांओं जाणू पाड़ी भाषा	जाणू पहाड़ी भाषाहौं	पहाड़ी ऐजे बोली जाणु।
21.	क्या आप यह भाषा बोल सकते हैं?	का तुसे ए बोली बोलि सको?	का तुएं एजी बोली बोल सकौ?	का तुम इ भाषा बोल सको?	का तुमे बोलि शौका एजी भाषा?	का तुमां ऐजे बोले, बोले जाणा।
22.	हां मैं यह भाषा भली प्रकार बोल लेता हूं।	आहो, आंऊ ये बोली बड़ी आच्छी बोलि सकू।	ओ हां ऐज् भाषा खूब बोल् हेड़ू (सक्)	हां आहों इया भाषा अच्छी तरे बोल सकू।	ओ मं एजी भाषा टौणकदी बोली शौकं।	ओ, हो ऐजे बोले आच्छी तरह बोले जाणु।
23.	आप क्या काम करते हैं?	तूसे का काम करो?	तुएं का काम करो?	तुमे का काम करो?	के काम करद आ तुम्हें?	तुमां का काम कोरा ऐ।
24.	यह बड़ा सुन्दर शहर है यहां मकानों का किराया भी सस्ता है।	यह बड़ा मजे रा शहर औसो, एती घौरो रा कराया भी बड़ा सस्ता असो।	एजो बड़ो बांठिओ नगर असो इंदा मकानौ रा करायां भी सस्ता असौ।	इ बड़ा सोणा शेरें असो इंदा मकाना रा कराया भी सस्ता असो।	जो बौड़ा बांको शहर आसा इन्धी मकानौ रा किराया बी सस्ता आसा।	ऐओनों बोडो बाठणों शहर आस्ति ऐदें मकानां रो कराओ सस्तो आस्ति।
25.	आप घर चलेंगे तो मैं कल तक रुकूंगा।	तूसे घौरो के चाल ले तो आंऊ काल तंई रूकणा।	तुएं घर चालौ लै तो हांऊ दोत् तांई रूकूणा।	तुमे जे घरा खे चाल ले तो आहों काला तंई रोउए।	घौर चालौ तब तबे मेरे बी कौले ताई इन्धी रैहणो। इन्धी रैहवों।	तुमां घोरा चाला एता हों बी काला झांऊ टेकू।
26.	माधव और सुन्दर दोनों सगे भाई हैं परन्तु धीरज उनका सौतेला भाई है।	माधव और सुन्दर धूने सगे बाई असो, पर धीरज तीनों रा सौतेला बाई असो।	माधव ओ सुन्दर दुनें सगें भाओ असौ पर धीरज तिनो रा रैको मा ऽरा जाआ असौ।	माधव और सुन्दर दोए सगे भाइड़ असो पैरी धीरज तीना रा सौतेला भाइड़ असो।	माधव और सुन्दर दुनी सौगें भाई आसा तिन्हों रा छोटा भाई आसा।	माधव और सुन्दर दुई साता भाई आस्ति धीरज तिऊरो सौतेला।
27.	खेत में हल चला कर मिट्टी को नरम कर लो।	खेचो दी हौल चलाई रो, माटी नरम करी लो।	खेचो बाओ माटा कौड़लो करौ (कौं दीर्घ स्वर में)।	बागटी दे हौल चाल-इरो माटी खे नरम करी लौ।	खेचा दी हौल चला ओ तौबे माटो नौमं कारौ।	डोखरा दे होल बाईयों माटों कोलो कोरो।

क्रमांक 1	हिन्दी 2	शिमला के आसपास 3	चौपाल के आसपास 4	सोलन के आसपास 5	कोटगढ़ के आसपास 6	रोहड़ू के आसपास 7
28.	आप कहां के रहने वाले हैं ?	तुसे कैई रे रौणी आलै ।	तुऐं कथेरै रहणं आलै	तुमे कैई रे रौणी आले असो ।	किदों आ तू	तुम किदलां रोहणा वाला ऐं ।
29.	रामपुर का वहीं तो मेरा घर है ।	रामपुरो रा । तेती तो मेरा घौर असो ।	रामपुरौ रे । से ही तो मेरो घर असौं ।	रामपुरे । सई तो मेरा घर असौ ।	रामपुरा का तिदी आ मेरो घौर ।	रामपुरा रां, तिदां तां मेरो घोर आस्ति ।
30.	एक शहर में एक राजा था ।	एक शहरो दा एक राजा था ।	एकी शहरौ (नगरौ) दा एक राजा थिया।	एकी शौहरा दे एक राजा था ।	एक शौहरा दी एक राजा थो	ऐकी शहरा दे एक राजो थो ।
31.	उसकी एक रानी थी ।	तेसरी एक राणी थी ।	तेसरे एक राणी थिग्र्	तेसरी एक राणी थी ।	तेसरी थी एक राणी ।	तेहरे एक राणे थे ।
32.	राजा ने दूसरा विवाह कर लिया ।	राजे दूजा ब्याह करी लोआ ।	राज रेका ब्याह किया (कर् हड़ा) ।	राजे रेका बेया किया ।	राजा दूजो ब्याह रचाओ ।	राजा दुजो वियाहो किओ ।

फागली

—नरेन्द्र शर्मा

फागली नामक मेला हिमाचल के ही नहीं, वरन सभी पहाड़ी प्रदेशों गढ़वाल और नेपाल में भी यह मेला मनाया जाता है। यहां मैं आपको कुल्लू जिला जो कि देव भूमि कह कर पुकारा जाता है (Valley of Gods) के फागली नामक मेले के बारे में बताने जा रहा हूं। यह मेला कुल्लू से लगने वाले क्षेत्र में आज से कई सौ वर्ष पूर्व रहने वाले लोगों या जाति की याद ताजा कराता है, और उस समय की (राक्षस जाति) या लोगों के रहन-सहन और संस्कृति पर प्रकाश डालता है। कुल्लू में जहां जहां यह मेला मनाया जाता है तकरीबन एक ही तरह से मनाया जाता है। इस मेले में जहां, कुल्लू के हर मेले में लोक नृत्य मनोरंजन का सबसे महत्वपूर्ण आकर्षण होता है, वैसे ही इसम भी होता है परन्तु इसी लोक-नाच को उल्टे सीधे इस मेले में नाचा जाता है। यह मेला राक्षसों की याद ताजा करने के लिये मनाया जाता है। ताकि इन्सान को यह ख्याल रहे कि "देवता से बड़े दानू" लोक भाषा में कहावत है, कि देवता से बड़े दानव हुए हैं।

मेले में नृत्य करने वाले खास किस्म की घास जिसे "रावल" कहते हैं, के वस्त्र बना कर पहनते हैं और सैंकड़ों वर्ष पुराने लकड़ी के बने मुखौटों जो कि उस समय की कारीगरी की पहचान है को मुंह पर लगाते हैं। इसके पहरावे और मुंह पर लगे मुखौटों से सभी नर्तक-मण्डली के सदस्य डरावने और उन द्वारा बनाए जाने वाले हाव-भाव से यह नर्तक और भी डरावने लगते हैं। दूसरा, उनका काम यह रहता है कि नाचते समय वे दर्शकों की तरफ ही देखते रहते हैं। कुछ देर बाद नृत्य करके सभी बैठ जाते हैं फिर और बारी बारी से एक एक करके दर्शकों के बीच घुसते हैं। दर्शकों में सुन्दर स्त्री, लड़की या किसी लड़के की ही तलाश करके अपने साथ लाते हैं। लाकर अपनी मण्डली में खड़ा करके अपने साथ स्त्री के लिए, कानों में, नाक में और गले में लगाने के गहने जो साथ लाए होते हैं, सबको दिखाते हैं और जिसे वो अपने साथ लाते हैं, उसे दिखाते हैं। यह सब कुछ देखने से ऐसा महसूस होता है कि उस समय जब ये जाते थे तो स्त्रियों या लड़कियों का उठाना मामूली बात समझते थे। इसके बाद उसी समय के दौरान कुछ अश्लीलता का भी वे लोग कुछ प्रदर्शन करते थे। आज कल तो काफी कम है पर ऐसा लगता है कि आज से कई वर्ष पूर्व इसका भी अच्छा खासा प्रदर्शन होता होगा। इसको देखने से आज का मानव यही सोचता है कि उस समय के लोग या जाति चरित्रहीन होते थे या श्लीलता से अनभिज्ञ होते थे। यह तो कुछ इस मेले में लोक-नाच की झांकियों की बात हुई।

विशेष रूप से यह मेला सभी बुजुर्ग आदमी कहते हैं कि, राक्षसों पर देवताओं अर्थात् राक्षस जाति पर अच्छे लोगों की विजय की खुशी में मनाया जाता है, जैसे लंका को राम द्वारा विजय करने के बाद दुशहरा मनाया जाता है। इसके बावजूद यह तो सभी जानते हैं कि कुल्लू व शिमला के हर गांव, कस्बे में अपने अपने देवता होते हैं जहां वर्ष में कम से कम एक बार एक उत्सव या छोटा मोटा मेला होता है। उसमें भी कुछ भाग इस मेले की कुछ सड़ी होती है। इस में देवता की पालकी के सामने देवता का चेला बैठता है और उसके सामने पुराने समय के कुछ औजार (शस्त्र) जमीन में गाड़ दिए जाते हैं। फिर चेला जिसे स्थानीय भाषा में गुर

कहते हैं, बारी बारी से एक एक शस्त्र को लेकर बाजे के ताल पर नाचता है, इन शस्त्रों में बहुधा खण्डा अर्थात् प्राचीन समय की तलवार, बहुत सी इकट्ठी लोहे की जंजीरें, भाला और तीन चार कटारें होती हैं। यह सब कुछ करने का सबसे बड़ा महत्व यह समझा जाता है कि इन शस्त्रों से देवताओं ने राक्षसों पर विजय प्राप्त की थी और लोगों को अभी भी यह विश्वास बना रहे कि देवता अब भी हमारी सुरक्षा के लिये तत्पर है। यही रस्म इस मेले में खुल कर और पूर्ण रूप से की जाती है।

ऊपर लिखित कुछ ही बातों से पाठक समझ गए होंगे कि यह मेला क्यों और कैसे मनाया जाता है। यह मेला देवताओं की राक्षसों पर विजय की खुशी और साथ में राक्षसों को दिए गए वचनों को पूरा करने की परम्परा में होता है। म यहां यह बात बताना चाहूंगा कि जिन्हें मैं राक्षस कह कर लिख कर अवगत करवा रहा हूं, वे राक्षस नाम के लोग या जाति जो भी थी, दुर्जन लोग थे और देवता स्वरूप थे, जो देवताओं में विश्वासी साधु स्वभाव या सज्जन लोग थे। जैसे कि हमारे हिन्दू धर्म के पवित्र ग्रन्थ रामायण में उस युग के सब से बुद्धिमान किन्तु दुराचारी रावण को भी राक्षस कहा गया है। अब मैं आपको इन्हीं राक्षसों और देवताओं के सम्बधों की लड़ी छोटी सी पूर्व कथा की ओर ले चलता हूं।

सैंकड़ों वर्ष पूर्व की घटना है। कुल्लू की अनुश्रुतियों में सागू नामक राक्षस का वर्णन आता है। इस राक्षस के बारे में यह प्रसिद्ध था कि इसका पेट कभी नहीं भरता था। यह राक्षस भृगु तुंग (रोहतांग दर्रे) पर, जहां एक छोटा सा परन्तु बहुत ही भयंकर नाला है, जो जल गिरने वाला प्रपात बन कर व्यास नदी में गिरता है, इसी नाले में रहता था। उसके आस पास ही नहीं, अपितु कुल्लू में अभी भी जो ज्यादा खाता है उसे "सागू खोल" कह कर पुकारा जाता है। कहा जाता है जब महान-ऋषि जमदगन स्पिति की ओर से कुल्लू की ओर आ रहे थे तो रोहतांग दर्रे में उनका सागू नामक इस राक्षस से सामना हुआ। जब सागू को यह पता चला कि महर्षि जी अकेले ही स्पिति से कुल्लू की ओर आ रहे हैं तो सागू ने अपनी मायावी शक्ति से दिन में ही अन्धेरा कर दिया। जब काफी देर बाद प्रकाश हुआ तो महर्षि जी ने अपने आपको सागू की कैद में पाया। जब यह समाचार लोगों तक पहुंचा तो लोगों में भय की लहर दौड़ गयी। सभी लोग अपने अपने देवताओं की शरण में चले गए और जमदग्न जी की रक्षा की प्रार्थना करने लगे। सभी की प्रार्थना पर अठारह देवता भृगु तंग पर आ कर इकट्ठे हो गये। जब सागू राक्षस ने देखा कि सभी देवता पृथ्वी पर उतर आये हैं तो सागू महर्षि को खाने की चेष्टा करने लगा, परन्तु वह जब भी ऋषि को हाथ मारता तो उसका हाथ शरीर के बजाए हवा में ही आर-पार हो जाता और हाथ म कुछ न आता। सागू (राक्षस) हैरान हुआ कि यह चंगा भला आदमी मरे सामने आंखें मूंदे बैठा है परन्तु हाथ शरीर से स्पर्श भी नहीं होता। सागू प्रयास करता रहा और समय वीतता गया और देवताओं ने सागू को युद्ध के लिये ललकारा। देवताओं के उतरने पर सागू देवताओं से भिड़ गया। सागू (राक्षस) बहुत बड़ा बलवान योद्धा था। परन्तु देवता भी किसी उद्देश्य से पृथ्वी पर साकार हुए थे, युद्ध शुरु हुआ, कई दिन युद्ध चलता रहा। इसी युद्ध के दौरान सागू मारा गया, परन्तु श्रुतियों के अनुसार कहते हैं कि, उसकी आत्मा अभी भी उसी नाले में है। अभी भी उस स्थान से डरावनी और भयानक आवाजें आती हैं। उसी को सागू की आत्मा कहते हैं। यह आत्मा हर वर्ष किसी न किसी तरह मानव बलि लेती है, यह सब ठीक ही पाया गया है। इस राह में, गलेशियर गिरने, फिसलने, हवा चलने या किसी और बहाने कई मौतें हर वर्ष मनुष्यों की होती हैं, भेड़ बकरियों की गिनती ही नहीं है।

इसी प्रकार कुल्लू की लोक-कथाओं और अनुश्रुतियों में बड़े-राक्षसों का वर्णन आता है, जो कई वर्षों तक देवताओं के लिए सिर दर्दी बने रहे। यह मेला जिसका मैंने वर्णन किया "टूण्डी" नामक राक्षस से भी सम्बन्धित बताया जाता है, जिसका राज्य इलाका लाहुल से लेकर नेपाल तक के सभी पहाड़ी इलाकों पर रहा होगा। फिर भी इस विषय में ठीक से कुछ नहीं

कहा जा सकता । कुछ भी हो, कुल्लू में इसका बहुत प्रभुत्व रहा, लाहौल स्पिति से ले कर गढ़वाल, नेपाल तक की सभी लोक कथाओं में "टूण्डी" नामक राक्षस का नाम सभी जानते हैं। इस मेले का सीधा सम्बन्ध इसी से बताया जाता है । इसमें सभी रस्में देऊखेल की तरह की जाती हैं । बाकी पहरावा वही होता है जो पीछे बताया गया है । मेले के दौरान कुछ बोलियां बोली जाती हैं। उसके दौरान किसी आदमी में इस 'टूण्डी" राक्षस की आत्मा आती है और तब वह डरावने डरावने कार्य करता है । मैंने यह स्वयं भी देखा है कि जब किसी में राक्षस की आत्मा प्रवेश करती है, तो सबसे पहले वह जो मशाल जलाए होते हैं उनको खाने के लिए झपटता है, क्योंकि आग से राक्षस काफी डरते हैं। वह व्यक्ति ऊंची ऊंची छलांगें लगाता है । सिर्फ एक ही चीज़ से वह डरता है–वह है शंख का पानी, जिसको छिड़कने से आत्मा दूर चली जाती है ।

इस मेले का एक महत्वपूर्ण अंग है कि इस मेले में "भारता" (भविष्यवाणी) जिसमें आने वाले साल में क्या कुछ और कैसा होगा ? वारिश, फसल, नुकसान, बीमारी आदि की भविष्यवाणी की जाती है । देवता का चेला जब उस में देवता की आत्मा प्रवेश करती है, बताता है, जिसको सुनने के लिये दूर दूर से लोग आते हैं । कहते हैं कि जब यह भविष्यवाणी (भारता) बोली जा रही होती है तो राक्षस भी इनको सुनने के लिये वहां आते हैं । कई बार उनकी आत्मा किसी आदमी में प्रवेश करती हैं। परन्तु वह ज्यादा हरकतें नहीं कर सकता क्यों कि सामने ही शंख में पानी पड़ा रहता है ।

कुल्लू के औटर सिराज में और भीतरी सिराज में यह भी कहावत है कि कोई समय था जब इन पहाड़ी प्रदेशों पर स्त्रियों का ही बोल-बाला था । लगभग वही राज चलाती थीं । उस समय कुछ लोगों ने ऐसे एक मेले की नींव रखी जिसमें सभी बेशर्मी और निर्लज्जता का दिल खोल कर प्रदर्शन करते थे । ऐसा सब देखकर स्त्रियों ने फिर पुरुषों के अधीन रहना स्वीकार किया । आज कल भी इसी सिराज में दीपावली-सहियाले मनाये जाते हैं, जिनमें लोग निर्लज्जता का प्रदर्शन करते हैं जिसे देखकर उस समय की राक्षस-सभ्यता की याद ताज़ा होती है ।

इस मेले मनाने के और भी कई कारण हैं। सबसे बड़ा कारण इस मेले को मनाने का यह है कि जब देवताओं ने राक्षस जाति का और उनके दमनकारी साथियों का संहार किया तो राक्षसों ने हार स्वीकार करके उन से वचन लिया कि हमारे नाम से कुछ मेले मनाये जाएं, जो देवताओं ने स्वीकार किये । वे चाहते थे कि इससे उनके नाम और जाति को लोग अंतिम समय तक नहीं भूलेंगे। क्योंकि सब से ज्यादा प्रभुत्व इन लोगों का पहाड़ी इलाकों में ही रहा है और इसी लिए इनके मेले–उत्सव भी ज्यादातर पहाड़ी इलाकों में ही प्रचलित हैं ।

गांव व डाकघर नग्गर,
जिला कुल्लू (हि० प्र०)।

STUDIES IN THE SYSTEMATICS OF HIMACHALI LINGUISTICS

—Siddheshwar Varma

I. Introductory

A Comparative study of problems to be considered in connection with a single sentence.

"A man had two sons" was implemented in the last note only with two speech areas, *viz.* मण्डियाली and कुलुई. In the present note we take up the next sentence as rendered in these two areas. It is ; "The younger son said".

Space will permit us to deal with only the subject of this sentence in this note, *viz.*, "the younger sons".

II. मण्डियाली : माट्ठे/घाबरए

(*i*) Literally, by the "younger son" In this construction, there is no expression to denote the comparative concept expressed by means of English: *i.e.* this concerns the syntax of the language, which coupled with "usage" is termed "stylistics" in these days; Some languages, stylistically, deem it unnecessary to overload the language by explicit terms, especially, when there were only two sons, what sense was there to use a comparitive expression?

(2) Now the problem in connection with this usage from the historical point of view, is, in which speech areas neat expressions as in मण्डियाली here, occur?

(3) Historical phenomena being processive, what were the stages in evolution of this structure?

III. मण्डियाली word माठे :

For "young" (as an agent) मण्डियाली has माठे=Hindi "छोटे ने"

The problems to be discussed in connection with माठे are of two types—

(1) Laxically माठे "young" is a tremendously involved complex indicating a contamination of many factors, as Turner, no. 9723 will indicate. For many original Sanskrit words like मन्द, मुण्ड etc., have co-operated to produce a joint effect, in the first stage Prakrit had मठ–lazy, Sindhi मठु base metal, Sindhi: मठो bad, कश्मीरी : मोठ dull, Bhadrawahi : माठु boy.

(2) Here the problem to be discussed is "What were the stages, in order which led to माठ्ठे in मण्डियाली : at least in the Himachali area?

(3) But the /ए/both in माट्ठे/घाबरए challenges a grammatical problem. Although the oblique case/-e/ had already turned up in Prakrit tumhe "by you", cf. Turner, no. 10511, yushmad-its relic occurring even now in Kashmiri *tohi* तुमने, its processive evolution in हिमाचली has to be discussed by first team-wise exploration.

IV. कुलुई equivalent तिन्हा मों मा–न होछे बेटें Apparent the कुलुई equivalent is much more elaborate.

(1) तिन्हा "of them" parallel to yushmad above is an inheritance from Prakrit but the challenging problem here is its processive stages in Himachali.

(2) मोंझा "Out of" may be apparently connected with मध्य the middle int he Turner, 14084, DardicKalasha-mocai "in the middle", khowar-muz middle, so that /ओ/ in the कुलुई word has some parallels in Dardic. But this may be a mere coincidence and is not necessarily a demonstration.

(3) For 'young' कुलुई 'होछे' is a still more baffling word, for Turner, 14084 shows not even a Prakrit parallel. We secure therefrom only parallels like Sindhi hocho, mean, low; L. hocha "quarrelsome"

5. Conclusion:

The problems which thinkers of the present decade have been challenged have been mentioned above as only representative illustrations. But even these are adequate enough to keep them busy.

2

1. Introductory:

The basic English sentence for which our मण्डियाली nucleus is in view, is as follows:

"Then their father gave away to him the share of the property".

For this, the मण्डियाली equivalent is as follows:— (p. 90)

'ता तेसरे बाबे तेसरी बांड लटेपटे री तसजो देई दित्ती'

Here we shall discuss only देई दित्ती

2. Finalization by Juxta-position of verbs:

The sense of finalization by the use of two verbs is unkown to old or to Mid Indo-Aryan. For instance, if a bargain was finalized, Sanskrit used two prefixes, e.g., पर्यावृत्त= (परि+आ+वृत्) was used, literally "around, thoroughly, to turn". Again entire devotion to something was expressed by two prefixes to the verb (अभि+सम+श्रि=firmly, together, to resort).

The problem generated by this मण्डियाली form is what was the origin and the processive stages through which देई दित्ती has been evolved.

Conclusion:

It may be tentatively suggested here that prefixes are unkown to a Dravidian language like Tamil, which would use two verbs for this equivalent, viz. "Kotu+pato" (give+fall) we have to explore the "variables" which functioned as determinants of such a remarkable form.

3

I. Introductory:

For the sentence "then their father gave away to him his share of the property", our nuclear मण्डियाली equivalent is: ता तेसरे बाबे तेसरी बांड लटे पटे री तेसजो देई दित्ती Now the जौनसारी equivalent for the same is—तेबी तीने जो किछ थो सो तिहुंख बाटी दिनी । (p.—84).

From this जौनसारी equivalent, two words, *viz.*, तिहुंख and बांटी दिनी will be discussed here.

II. The importance of the pronoun तिहुंख :

In any human language, pronouns, by virtue of their top most frequency, constitute the most important element of structure. Now if we refer to Turner no.—5612, Prakrit *tassa*-(संस्कृत–तस्य) has given forms like—

> Kashmiri: *tas*, Kangri तेजो, मण्डियाली, तेसरी : but जौनसारी: तिहुंख commands a transitional stage, in which this । स । was further replaced by । ह । But even the majority of जौनसारी forms, as indicated by तीने, have lost the । ह । : So the problem arises, what were the processive stages through which जौनसारी । तिहुं । was arived at ?

III. Structure of बांटी दिनी :

As discussed in the last note the structure of बांटी दिनी : is exactly parallel to that of मण्डियाली–देई दित्ती, involving the juxta position of two verbs—

(1) The first verb "बांटो" is connected with Prakrit वटंग–"Share" Turner, 11235, Kashmiri,: Wand, Sindhi: Vanda, Dardic Shina L.S. bano, Kumauni ban.
(2) The second verb "दिनी" prompts us to refer to Turner—6410 Pali दिन्न "given", Prakrit: दिण्ण—Sindhi: डिनो, old Hindi : दीन्ह

Conclusion:

Thus here is another problem for tracing the processive stages through which "दिनी" has been evolved.

—B-35, Defence Colony,
New Delhi-110024.

विविधा

कहलूरी कविता : एक अध्ययन

—सरोज शर्मा

हिमाचल प्रदेश की पहाड़ी भाषा की विभिन्न उपभाषाओं में काव्य-रचना आधुनिक उपलब्धि है। साहित्य
क्रिया के रूप में यह लगभग 1960 के पश्चात् की घटना है। बिलासपुर की स्थानीय उपभाषा का नाम कहलूरी
है, क्योंकि बिलासपुर रियासत को कहलूर रियासत कहा जाता था। इस के पूर्व में आजकल का जिला सोलन
है और पश्चिम में जिला हमीरपुर व दक्षिण-पश्चिम में पंजाब का नंगल और कीरतपुर इलाका है।
कहलूरी कविता के अध्ययन की हमारे पास यह सामग्री उपलब्ध है: राज्य भाषा-संस्थान द्वारा प्रकाशित
पहाड़ी कविताओं के तीन संकलन काव्य-धारा भाग-1, काव्य-धारा भाग-2 तथा भाग-3, तथा हि0 कला-संस्कृति-भाषा
अकादमी, शिमला, द्वारा प्रकाशित पहाड़ी कविताओं का संकलन-माला रे मणके।
श्री मनसाराम शर्मा 'अरुण' की पुस्तक 'सदियां रे मोड़' तथा रूप शर्मा की पुस्तक 'फुल्ल कने पत्ते'।
इन छ: पुस्तकों में से काव्य-धारा के तीन खण्ड और माला रे मणके संकलन है। अर्थात इन चार पुस्तकों
म हिमाचल प्रदेश के विभिन्न आंचलों के पहाड़ी कवियों की कविताओं का संकलन है। इन चार पुस्तकों में
187 कवियों की कुल 334 कविताओं का संचय है, इनमें बिलासपुर के पांच कवियों की दस कविताएं संकलित
हैं।
कुल कवियों और उनकी कुल कविताओं के अनुपात में कहलूरी के कवि और उनकी कविताएं केवल तीन
प्रतिशत हैं। इसके कारण की खोज हम अलग रूप से करेंगे।
उपर्युक्त छ: पुस्तकों में से दूसरी दो पुस्तकें सदियां रे मोड़ तथा फुल्ल कने पत्ते हैं। इनमें से 'सदियां
रे मोड़' एक लघु खण्ड काव्य है तथा फुल्ल कने पत्ते श्री रूप शर्मा की अपनी कविताओं का संकलन है।
अध्ययन के लिए हम सर्वप्रथम 'सदियां रे मोड़' का अवलोकन करते हैं। इस पुस्तक की प्रेरणा श्री मनसा
राम शर्मा 'अरुण' ने सन् 1971 में भारत विजय से प्राप्त की है। परन्तु इस काव्य में निहित विचारधारा
प्रतिराष्ट्रवादी नहीं है। अर्थात इसमें राष्ट्रवाद का उग्र रूप नहीं है। कवि ने दो नारी पात्रों की सृष्टि की
है, सीता और हमीदा। इन्ही के माध्यम से युद्ध की पीड़ा और मानव वेदना को प्रतीकित किया है। इस तरह
कवि ने समूचे और अन्तिम प्रभाव को मानवतावाद की दिशा में विकसित किया है। अपने समूचे कथ्य को पांच
लघु सर्गों में बांटा है। उनके नाम है खून, जुल्म, भ्याग (प्रात: काल), घ्याना (इस प्रसंग में शमसान की
अग्नि), सान्ति (शान्ति)। कवि की सफलता इस बात में है कि उसने प्रत्येक सर्ग में विषय-वस्तु, विचार-भाव
और स्थिति-परिस्थिति के अनुकूल शब्द संयोजन करके काव्य-वातावरण और काव्य प्रभाव उत्पन्न किया है।

अपने इस कथन की पुष्टि के लिये कुछ उदाहरण प्रस्तुत करते हैं :

1 जुल्म कमाए लक्ख करोड़ां
हिल्ण आया फटी दरार ।
हीरे-मोती लगे चिलकणे
बीरांरे हुण बणे मजार ।

X X X X

2 ब्याग हुआ धरती पर सारे
पुरबाते चमकी चलकोर ।
माण्हु आया अपने रस्ते
खरे मने था पाया जोर ।

X X X X

3 ध्याना बुझी गया समसाना
सुनसाना हुण बिखरी राख ।
सान्त पई सभनीं जो तित्थी
लगी गाई पीडारी हाख ।

उपर्युक्त तीन उदाहरणों में अरुण की काव्य सुषमा, उपमान योजना और बिम्ब–विधान की दिशा में क्रियामान नहीं है। इसके विपरीत लेखक स्थिति के सांग-चित्रण की ओर गतिशील है । पुरानी परिपाटी के अनुसार उपमान योजना और बिम्ब–विधान कवियों का प्रिय विषय रहा है परन्तु आधुनिक काल की एक काव्य परिपाटी स्थिति चित्रण को अधिक महत्वपूर्ण समझती है ।

कहलूरी की दूसरी काव्य पुस्तक रूप शर्मा की अपनी कविताओं का संकलन 'फुल्ल कने पत्ते' है । इस संकलन में कवि की अपनी 33 कविताएं संचित हैं । इन कविताओं को स्थूल रूप से तीन वर्गों में बांटा जा सकता है :—प्रेम श्रृंगार विषयक, हिमाचल प्रदेश का प्राकृतिक वर्णन, विविध—जिनमें ग्राम जनता, मजदूरवर्ग समाजवाद, किसान, देशभक्ति आदि आते हैं ।

इस कवि का विषय–क्षेत्र इतना विस्तृत है कि भावों की बिखराहट स्वाभाविक है । रूप शर्मा मूल रूप में उपन्यासकार हैं, कविता इनका गौण क्षेत्र है । फिर भी कवि की भावना की 'स्वच्छता और ऋजुता द्रष्टव्य है:—

1. तू सदा हासदी गौंदी रैंये हऊं सदा तमन्ना करां,
शर्म तेरी अक्खीं मंझ रैंये हऊं सदा तमन्ना करां,

X X X X

2. ब्यागा—ब्यागा रंग-बिरंगी किरणां,
मिजो इक पाठ देया करदी
हुंदा नी इत्थी किच्छ म्हेरा जग मंझ,
मिजो सै समझाया करदी ।

जहां तक काव्य-धारा के तीन भागों और माला रे मणके इन चार पुस्तकों में पांच कवियों की संकलित 10 कविताओं का प्रश्न है, कहना होगा कि उन पांच में से दो तो यही कवि हैं जिनका ऊपर उल्लेख किया है अर्थात मनसाराम शर्मा अरुण और रूप शर्मा । शेष तीन कवि हैं :—सीता राम खजूरिया, मुकुन्द नड्डा और शबीर कुरैशी । खजूरिया और नड्डा की कविताओं का प्रिय विषय सतलुज के किनारे बसे पुराने बिलासपुर की याद है ।

आजकल बिलासपुर के निकट का सतलुज गोबिन्द सागर में मिल गया है । तब वहां सांडू का मैदान था। अनेक मन्दिर थे । उस मैदान में नलवाड़ी का मेला लगता था । उस मैदान के वातावरण में बिलासपुर के अनेक निवासियों की तरह तरह की यादें मिली हुई थीं । उनमें से कुछ का स्मरण कविता में आन्तरित हुआ है । एक उदाहरण:—

चौतड़ें रा नौंण............रौणक पारले बजारा री,
रंगनाथा रा मेला कसम सतलुजा री धारा री,
हाक्खी अग्गे नजारे आऊंदे ओ...........
सुन्ना-सुन्ना लगदा बिलासपुर ओ.........

जहां तक हमारी जानकारी है, बिलासपुर जिला में सन् 1968 से आज तक लगभग 9 वर्षों में 4 साहित्य गोष्ठियां हुई हैं, फरवरी, 1971 में, नवम्बर, 1972 में, मार्च 1974 में और दिसम्बर, 1975 म। पहली तीन राज्य-भाषा संस्थान द्वारा आयोजित हुई और अन्तिम हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी द्वारा । 9-10 वर्षों में चार संगोष्ठियों का आयोजन पर्याप्त नहीं कहा जा सकता । यथा-प्रथा साहित्य-गोष्ठियों में प्रदेश के प्रत्येक जिले से साहित्यकार आमन्त्रित किए जाते हैं । जब तक हम जिला बार गोष्ठियों में केवल उसी जिला की साहित्य प्रतिभा की खोज न करें तब तक स्थानीय प्रतिभा का विकास नहीं हो सकता। पहाड़ी भाषा के विकास का मूल प्रयोजन यही है कि जनता-जनार्दन अपने में से सामान्य साहित्य प्रतिभा को उभारे और सरकार के अधिकरण उस प्रतिभा को प्रोत्साहन दें । कहलूरी कविता अपनी भाषागत सरलता के कारण पड़ोस के ऊना, शिवालक जनपद के कुछ कवियों के लिए आकर्षणशील बनी है । ऊना के निकट महतपुर के एक स्थानीय कवि विष्णु महतपुरी ने काव्य-सर्जन के लिए कहलूरी कविता-शैली को अपनाया है । कहलूरी का महत्व मण्डियाली, बघाटी और शिवालिकी के लिए मध्यवर्ती है अतः यहां कवि-गोष्ठियों का आयोजन मध्यवर्ती महत्व का है।

—H.C.S. 11-A,
रौड़ा सैक्टर,
बिलासपुर (हि०प्र०)

लोकोक्तियों में गद्दी-जनजीवन

—वसन्त शर्मा

लोकोक्तियां किसी समाज के ज्ञान जगत की निधियां होती हैं। मनुष्य जो ज्ञान पुस्तकों में ग्रहण नहीं कर सकता, वह उसे रोजमर्रा के जीवन में सहज सीख लेता है और जो कुछ सीखता है उस अनुभूति को वह ऐसी उक्ति देता है जो सामाजिक विषय विशेष को स्पष्ट सामने ला खड़ा करती है परन्तु किसी समाज की लोकोक्ति का तब तक सही अर्थ और भाव प्रकट नहीं होता जब तक उस समाज की परिस्थितियों और लोकोक्ति-विशेष की भावनाओं का ज्ञान नहीं होता। उदाहरणार्थ, गद्दी जन-जाति में प्रचलित इस लोकोक्ति को लें :—

बकरी री खिड़कं ई पतयन्दी है

साधारण शब्दों में इस का अर्थ है कि बकरी को खिड़क (वृक्ष के पत्ते) ही सन्तुष्ट रखते हैं। कोई भी व्यक्ति इस अर्थ से लोकोक्ति का मजा नहीं ले सकता। जब तक इस में निहित मूल अर्थ को समझा नहीं जाता। बकरी एक ऐसा पशु है जो कभी निठल्ला नहीं बैठता। यह गद्दी को बहुत तंग करती है, खेतों में उजाड़ करने के लिए हर दम तैयार रहती है। उसे शान्त रखने का एक सहज तरीका है, 'खिड़क के पत्ते खिलाना'। बकरी खिड़क को बहुत पसन्द करती है परन्तु वह इतनी कड़वी होती है कि अधिक नहीं खाई जाती। अधिक भी खा ली तो बकरी को बदहजमी हो जाती है। अतः खिड़क खाते ही बैठ जाती है। इसी भाव से जब कोई बहुत तंग करे तो उसे यह लोकोक्ति कही जाती है कि 'तुझे शहद देकर ही मारा जाएगा'।

गद्दियों का मुख्य धन्धा भेड़-बकरी पालना है। इसलिए उन की लोकोक्तियां भी भेड़-बकरियों पर आधारित अधिक हैं। भेड़-बकरियों का मूल आधार लेकर जीवन की सच्चाइयों की अभिव्यक्ति इन लोकोक्तियों की मुख्य विशेषता है। अधिक चतुराई दिखाने वाले को प्रायः कहा जाता है :—

ऊंटां अन्दर भेड़ां पछैणन आला

अर्थात् ऊंटों के बीच में से भेड़ पहचानने वाला। अब ऊंट और भेड़ को कौन नहीं पहचानता। इसलिए ताने के रूप में इस का प्रयोग होता है। इसी तरह इसे किसी के अनजानेपन को दिखाने के लिए कहा जाता है—

भेडां री लिगुणी कसा कनारी

अर्थात् भेड़ की पूंछ किस ओर है। भेड़ की पूंछ की कोई दिशा नहीं हो सकती। कभी दक्षिण, कभी पश्चिम, उत्तर या पूर्व। जिस ओर चाहे बैठ गई। किसी की मूर्खता दर्शाने के लिए यह कहावत बहुत प्रसिद्ध है। बकरी का बच्चा (छेलू) बकरी से भी अधिक चुस्त तथा मनचला होता है। वह हर समय इधर उधर भटकता रहता है। इसी दृष्टान्त को ध्यान में रखते हुए लोकोक्ति है :—

छेलू होई करि नीं उटक तां बकरु होई के बटकणा

अर्थात् छेलू होकर यदि उछला कूदा नहीं तो बकरा होकर क्या भागेगा। समय बीतने पर पश्चाताप

फिजूल है। समय बीतने के बाद यदि कोई शेखी बघारे तो उसके सम्बन्ध में इस लोकोक्ति का प्रयोग होता है। एक और लोकोक्ति में जीवन की सच्चाई देखें :—

दुबली भेड़ नवकंग चरे, न ठेसा लगे न जान मरं

दुर्बल भेड़ एकान्त में चरती रहे तो अच्छा है। न धक्का लगेगा, न जान से मरेगी। पहाड़ों पर भेड़ों के एक दूसरे के साथ लड़ने से कमजोर भेड़ लड़ते हुए गिर जाती है और मर जाती है। अतः दुबली भेड़ अन्य से अलग थलग रहे तो उसी में उसकी सुरक्षा है। यह लोकोक्ति झगड़े से दूर रहने की ओर संकेत करती है। बुद्धिमत्ता इसी में है कि झगड़ों में न पड़ा जाए। यह इसलिए जरूरी है कि भेड़-चाल को कभी भी किसी समाज में अच्छा स्थान नहीं मिला है। जो लोग इस बुद्धिमत्ता से काम नहीं करते उनके बारे में कहा जाता है—

भड़ की जाणे फफुरु की साग ?

उसे केवल खाने से सरोकार है, फफरा है या साग है, यह वह क्या जाने। समाज में बिना समझदारी के रहना उस कुत्ते के समान है जिसे खाने के लिए मरी भेड़ की टांग दी जाए तो उसे वह न खाए और बाद में भूख लगने पर कोल्हू को चाटने जाए :—

दिती जंघा कुत्र न खा कोल्हू चटण जा

जो आदमी इस तरह समझ से काम नहीं करते और हर जगह अपनी मूर्खता के सबूत देते हैं वे जीवन में कभी सफल नहीं होते। सफलता उन से कोसों दूर भागती है, असफलता का उन के यहां डेरा लगा रहता है, वे नाश की ओर बढ़ते हैं। ऐसे ही जैसे कुत्ते को तब टट्टी आती है जब भेड़िये के आने का समय होता है :—

बाराघा री आणा तां कुत्रा री हगणेला

गद्दी समाज में जीवन का अनुभव भी सर्वोपरि है। पण्डित की पण्डताई, वैद्य की दवाई और मशालची की रोशनाई किसी काम की नहीं, यह सभी दूसरों को शिक्षा, दीक्षा देते हैं, स्वयं अंधेरे में होते हैं। इन तीनों का एक ही स्थान है :—

पंडत वैद मिशालची तीनों बतर कहान, लोकां जो दसन बानणा अप्पु निहारे जान।

यह ताने कुछ तो अनुभव पर आधारित होते हैं, समाज में एक दूसरे के प्रति ताने-माने चले रहते हैं। यह ताने कुछ एक दूसरे के प्रति अपनी भावना की अभिव्यक्ति के कारण होते हैं। भले ही वे गुण सभी में न हों, और समाज में और हर जाति में अच्छे बुरे के अपवाद हों। फिर भी एक दूसरे के प्रति साधारण धारणाएं हर क्षेत्र में प्रचलित रहती हैं और इन से समाज की विचारधाराओं का पता चलता है। गद्दियों के विरोधी उन्हें हर समय अपने अधीन रखने की शिक्षा देते हैं, क्योंकि ये पहाड़ों पर स्वच्छंद चलते हैं और किसी के अधीन नहीं रहते।

गद्दी गुजर लवाणा, जित मिले तित दबाणा।

गद्दी, गुजर, लवाणा ये तीनों ही किसी के नियन्त्रण में नहीं रहते। इन्हें काबू में रखा जाना चाहिए। प्रयत्न यही रहना चाहिए कि जहां मिलें इन्हें तुरन्त अधीनता में लें। वरना ये खा पी कर भी किसी के नहीं होते। कहावत प्राचीन काल की है, वर्तमान परिस्थितियों में सही नहीं है।

गद्दी मित्तर किसके भत्त खाया खिसके

इसके विपरीत गद्दी लोग अपने विरोधियों को दूसरे अनेक ढंग से ताना देते हैं। ये लोग दुकानदार पेशे से सताए होते हैं या दूसरे शब्दों में इनसे धोखादेही के लिए डरे रहते हैं। इसलिए कहते हैं :—

कां, कराड़, कुत्ते रा बसाह नी करना सुत्ते रा।

यदि कव्वा, वनिया और कुत्ता सोया हुआ भी हो, तो भी उसका विश्वास नहीं करना चाहिए। एक दूसरी धारणा अन्यों के प्रति यू दिखाई गई है–

काला ब्राह्मण, गोरा डूम, भले नी हुंदे कदी तुम

जोगी और डूम का जीवन गद्दी लोगों को कभी अच्छा नहीं लगा है। वे स्वयं मेहनती और आत्म-सम्मानी हैं अतः मांगने आदि का पेशा उन्हें कहां पसन्द हो सकता है।

जोगी रे दो दुःख, अक निदर अक भुख

जोगी को दो ही दुख है–या नींद या भूख। उसने और कोई जिम्मेदारी समझी ही नहीं है। कोई काम वह नहीं कर सकता। मुफ्त खोरा है। चू कि उसका पेशा हो गया है, इसलिए उसे कसूरवार नहीं समझते।

बसदा पाणी रसदा जोगी, दोष न लागे कोई

मांगने वालों पर ही दूसरा कटाक्ष देखें––**अप्पू मियां मांगते द्वार खड़े डूम।**

स्वयं मांग कर गुज़ारा करते हैं तो दरवाजे पर डूम खड़े हो गए। ऐसे आदमियों के पास यदि कहीं तथा-कथित आय मिल गई तो फिर नींद हराम हो जाती है—भूख खत्म हो जाती है।

डूमे री हांडी भत, राती नींदर न दिने भख

इसी तरह एक दूसरी कहावत है कि बरड़ (जाति के) आदमी के पतीले में चावल बच जाए तो उसे रात भर नींद कहां से आएगी।

बरड़ा री हांडी भत तां नींदर खड़ऊं

समाज में प्रचलित विभिन्न व्यापार-धन्धों के बारे में भी गद्दी लोगों की मर्यादाएं अपनी हैं। जीवन-यापन के कुछ ही साधन गद्दी लोगों को उपलब्ध हैं। उन पर उन के विचार विभिन्न हैं–

कठन चाकरी, मधम भेड़, सुखम करसाणी।
डग्गी पोटली, मौता री नसाणी

नौकरी का काम बड़ा कठिन होता है। भेड़ बकरी चराना मध्यम दर्जे का धन्धा है। किसान का काम सुन्दर है, मांगने से मौत अच्छी है और घराट (पन चक्की) के काम में हानि ही हानि है। उसे कुछ नहीं मिलता।

घराटी करो हक्क, तां संझा जो नीं छक्क,
जे करो वेहक्क, ता पणिहारु नी रहंदे अक्क।

घराटी के घराट पर जो आटा पीसता है उस की पिसाई के रूप में उसे आटे में से कुछ भाग मिलता है या वह मालिक की अनुपस्थिति में स्वयं आटे से भाग निकाल लेता है। यदि वह ऐसा करते समय "हक्क" (इन्साफ) करता है, पूरा भाग निकलता है तो शाम को उसे पूरा खाना नसीब नहीं होता। उसके परिवार को पूरा भोजन नहीं मिलता। यदि वह न्याय नहीं करता है या अधिक भाग निकालता है तो आटा पिसाने के लिए बाद में कोई लोग नहीं आएंगे। दोनों तरह से उसे कोई लाभ नहीं पहुंचता। गद्दियों के लिए सब से अच्छी जिन्दगी भेड़ बकरी, पशु पालना है। जिस के पास पशुधन है उसका ही सुखी जीवन होता है, अन्यथा नहीं।

छीर्छी न बच्छी, जिंदड़ी किआं अच्छी

जिस के पास छिर्छी (खाद) करने को भेड़ बकरियां नहीं हैं, और गाय बच्छियां नहीं हे उसका जीवन कैसे अच्छा हो सकता है? अर्थात उसका जीना व्यर्थ है।

—मौनीटरी विभाग,
आकाशवाणी, शिमला, हि० प्र०

निष्पादन कलाओं के सम्बन्ध में अकादमी की गतिविधियां

निष्पादन कलाओं से अभिप्राय संगीत, नृत्य और नाट्य से है। इन तीनों का एक सांझी नाम निष्पादन कला (परफॉर्मिंग आर्ट) है। इस क्षेत्र में अकादमी की गतिविधियां दो दिशाओं में हैं:—

(क) स्वयं अकादमी द्वारा कार्यक्रमों का संयोजन, उत्पादन और मंचन; तथा—
(ख) स्वैच्छिक संस्थाओं को ऐसे कार्यक्रमों के लिये अकादमी के द्वारा वित्तीय सहायता और तकनीकी सहयोग प्रदान करना।

अकादमी ने स्वयं अभी तक तीन नाट्य संयोजित और उत्पादित किए हैं, वे हैं 'लाटी शरजांग-हिना डन्डुव', 'प्वाड़ा झांखो अजवा', और 'सुन्नी भूंकू': इनके इलावा एक मराठी नाटक का हिन्दी रूप "खामोश अदालत जारी है" का मंचन करवाया गया है। पहले नाटक के दस मंचन हो चुके हैं। इन चारों नाटकों के विभिन्न मंचनों में जिन कलाकारों का सहयोग अकादमी ने प्राप्त किया है, उनकी सूची हम नीचे देते हैं। स्वैच्छिक संस्थाओं को भी संगीत नृत्य-नाटक के कार्यक्रमों के लिये अभिनयों के हिसाब से अकादमी द्वारा वितीय सहायता प्रदान की जाती है। संस्कृति का यह निष्पादन कलापक्ष वास्तव में एक सहभागी क्रिया (पार्टिसिपेटिव एक्टिविटी) है, अर्थात स्वतन्त्र कलाकारों के मिलाप से बनी स्वैच्छिक संस्थाओं और सरकार द्वारा निर्मित तदर्थ अभिकरणों के परस्पर सहयोग और सहयोग से जनहित के लिये निष्पादन कलाओं का विकास और प्रसार होता है। इस उद्देश्य से स्वैच्छिक संस्थाओं को संगीत नाट्य मंचनार्थ-अकादमी के द्वारा वित्तीय सहायता और तकनीकी सहयोग प्रदान किया जाता है।

अकादमी के द्वारा जो नाट्य-संगीत कार्यक्रम आयोजित किए गए हैं, उनका विवरण हम इससे पूर्व देते रहे हैं। जुलाई, 1977 तक की अवधि के कार्यक्रम का संक्षेप हम यहां दे रहे हैं।

30 जून, 1977 को प्रदेश सरकार में मन्त्रिमण्डल विषयों-विभागों की सुपुर्दगी से शिक्षा मन्त्री श्री दौलत राम चौहान ने अकादमी के अध्यक्ष पद को अलंकृत किया। अतः प्रथम जुलाई, 1977 से अकादमी के कार्य में स्पन्दन आरम्भ हुआ। 3 जुलाई, 1977 रविवार को युनिवर्सिटी गैस्ट हाऊस में बिलासपुर जनपद का सांस्कृतिक कार्यक्रम हुआ। शिक्षा मन्त्री महोदय उसमें मुख्य अतिथि थे। उन्होंने वहां जो प्रवचन किया, उस में सांस्कृतिक विचार-दिशा के लिये एक दृष्टिकोण (विज़न) प्राप्त हुआ। दस-बारह दिनों के श्रमसाध्य अभ्यास के बाद 28 जून, 1977 मंगलवार सायं गेटीथियेटर शिमला में मराठी नाटक का हिन्दी रूपान्तर "खामोश अदालत जारी है" अकादमी के द्वारा मंचित किया गया। श्री अनुपम खेर और कुमारी मृदुला कौशिश हिमाचल के ये दो छात्र राष्ट्रीय नाट्य स्कूल दिल्ली में प्रशिक्षण ले रहे हैं। अकादमी ने इन दोनों के सहयोग से इस नाटक को प्रस्तुत और मंचित किया। दर्शक दीर्घा में मृदुला के लिये प्रशंसा और फिर शिमला के नाट्य-चिन्तकों में कलाकारों के लिए आदरभाव संचरित रहा। इस अवसर पर प्रदेश के कृषि मन्त्री श्री विचित्र सिंह जी मुख्य अतिथि थे। उन्होंने विचार व्यक्त किया कि अकादमी को ग्रामीण समाज के लिये भी नाट्य कार्यक्रमों का आयोजन करना चाहिए। इस कार्यक्रम की सफलता से उत्साहित हो कर अकादमी ने चम्बा जनपद की लोक कथा "सून्नी भूंक" को संगीत-

नाटिका के रूप में प्रस्तुत किया। इस पर सात दिनों का श्रमसाध्य अभ्यास किया गया और 12 जुलाई, 1977 मंगलवार सायं कालीबाड़ी शिमला में इसका मंचन हुआ। मुख्य अतिथि शिक्षा मन्त्री श्री दौलत राम चौहान थे। सुन्नी की भूमिका कुमारी चन्द्रा ने निभाई और भूंकू की श्री अच्छर सिंह परमार ने। शिक्षा मन्त्री ने अपने अध्यक्षीय प्रवचन में कहा कि जगत में प्रीत का महत्व सर्वसम्मत है परन्तु श्रृंगार का सहचर शौर्य है। देशभक्ति और वीर रस के उपयुक्त नाटक भी प्रदर्शित होने चाहिए। तीसरे दिन, 14 जुलाई, 1977 वृहस्पतिबार को अकादमी से सहायता प्राप्त करके हिमाचल थियेटर द्वारा एक लघु नाटक "यह धरती बलिदान की" कालीबाड़ी हाल में ही प्रस्तुत हुआ। इस अवसर पर भी शिक्षा मन्त्री महोदय, इस विचार से पधारे थे कि स्वैच्छिक संस्थाओं के प्रस्तुतीकरण स्तर का अवलोकन किया जा सके। श्रावण मे चम्बा में मिंजर मेला का उत्सव होता है, वहां के प्रबन्धकों ने चम्बा जनपद की इस संगीत नाटिका "सुन्नी भूंकू" के चम्बा में अभिनय की मांग की। तदानुसार 27 जुलाई 1977 बुधवार को चम्बा चौगान के खुले रंगमंच पर इसका मंचन हुआ। कृष्ण कालिया का मर्मस्पर्शी कथा-गायन स्थानीय दर्शकों—श्रोताओं को द्रवित कर गया।

"सून्नी भूंकू' का अभिनय अभी हाल की घटना है, अतः इसका कुछ विस्तृत परिचय पाठकों को देना उचित प्रतीत होता है।

हिमाचल में रावी और चनाब (चन्द्र और भागा) की पर्वतीय उपत्यका में भरमौर और लाहुल दो रमणीक क्षेत्र हैं। भरमौर के गद्दी और लाहुल के भोटले लोग वहां की प्रकृति की रमणीयता में विचरणशील रहते हैं। बीच में 'जुगती' नाम की ऊंची जोत (पहाड़ी पास) है। चन्द्र और भागा दो अलग-अलग नदियां हैं, वे तांदी नामक स्थान पर मिलती हैं। वहां मेला लगता था। उसका नाम था-तंदी जातरा। गद्दी पुहाल लोग हैं, भेड़ बकरियां चराते हैं और अच्छी चरागाहों की तलाश में घूमते फिरते हैं। कुछ चरागाहें वे अपने लिए निश्चित कर लेते हैं। वसन्त ऋतु लगते ही भरमौर के कुछ गद्दी जुगती जोत पार करके ऊंचे खंखरोले भोटल देस (लाहुल) में पहुंच जाते हैं। कहते है कि कोई चार सौ साल पहले भरमौरी गद्दियों के एक काफले में 'भूंकू' नामक पुहाल उस 'भोटले देस' में गया था। 'तंदी जातरा' में उसने सून्नी भोटली को देखा था, तब वे दोनों अपनी-अपनी टोली में नाच रहे थे। दोनों की निगाहें एक दूसरे के दिलों में चुभ गई। भूंकू पुहाल ने अपनी भेड़ बकरियों के साथ उस इलाके में कोई चार पांच मास रहना था वह अपने भाईचारे के दूसरे पुहालों से अलग हो गया। 'सुन्नी' ने उसे अपना पाहुना बना लिया। गरम खिचड़ी में पिघला घी खाते-खाते उसे छटड़ा महीना लग गया। उसकी भेड़ बकरियां घास के तिनके चरती रहीं, उसकी रक्षिका उसकी कंठी कुती हड्डियां चबाती रही, और भूंकू अपनी सून्नी का पाहुना बन कर खिचड़ी खाता रहा। कुछ तृप्ति के बाद उसे अपनी भेड़ें याद आईं, अपने भाईचारे का ख्याल आया, अपने भरमौरी-घर का स्मरण आया। अब उसके मन में द्वन्द्व आरम्भ हुआ, एक ओर सून्नी की प्रीत है और दूसरी ओर अपनी भेड़ों और अपने भाइयों के साहचर्य का स्मरण। भूंकू से सून्नी का निवेदन है कि भेड़ बकरियों की चिन्ता न करे, अर्थात् स्मरण को छोड़ और प्रत्यक्ष को ग्रहण करे। परोक्ष का स्मरण और प्रत्यक्ष का तथ्य दोनों उस पुहाल के ग्रामीण मन पर भारी बन गए। पुरुष का स्वभाव है कि वह पार्थिव शक्ति से जुड़ना भी चाहता है और हटना भी चाहता है। पार्थिव शक्ति उसे बांधना चाहती है। सून्नी को छोड़ वह पुहाल अपनी भेड़ों को लेकर भरमौर की ओर चल पड़ा परन्तु सुन्नी को छोड़ते ही सून्नी उसके मन में सूक्ष्म होकर प्रवेश कर गई। अब भूंकू के लिए सुन्नी एक स्मृति बन गई और उसकी सारी काया के अन्दर समा गई। जिस्मों से दूर हुए सून्नी और भूंकू की देह विरह की आंच में तप कर पावन हो रही थी। प्रीत का दूसरा पक्ष होता-है ईर्ष्या। चार बूढ़ियों ने एक मत बनाया कि सुन्नी भोटली को भूंकू गद्दी से अलग किया जाए ताकि कबीलों की मर्यादा कायम रहे। सुन्नी को कहा गया कि भूंकू भौंरा था, रस लकर चला गया है। परदेसी पंछी था, फल टूक कर चला गया है, अब नहीं आएगा, तुम्हें धोखा दे गया, उधर भूंकू को संदेश दिया गया कि सुन्नी मर गई है।

प्रस्तुत संगीत नाटिका में केवल इतनी कथा है। लगता है कि यह अधूरी है। इस लोक-कथा के कई रूपान्तर हैं। उनके अध्ययन और अनुशीलन से सम्भाव्य सत्य अथवा काव्य सत्य के निर्माण की अभी आवश्यकता है।

अस्तु! काली बाड़ी-हाल में आयोजित मंचन के प्रस्तुत अभिनय में चन्द्रा की भूमिका सुन्नी के रूप में और अच्छर सिंह परमार की भूमिका भूंकू के रूप में सराहनीय रही। अशोक हंस की प्रकाश-व्यवस्था ने अभिनय को आकर्षक बनाया, योगेश गम्भीर का निर्देशन था। आदरणीय शिक्षा मन्त्री महोदय श्री दौलत राम चौहान इस अवसर पर मुख्य अतिथि थे। भारी वर्षा के बावजूद दर्शकगणों से हाल भरा था। अभिनय में 'भरत नाटयम्' की शैली का अनुसरण था। आंगिक अभिनय से ही वस्तुओं और तथ्यों का बोध करवाया गया। सहभागियों को मुख्य अतिथि ने प्रमाणपत्र दिए, अपने प्रवचन में इस नाटिका के समूचे प्रभाव की प्रशंसा की। यवनिका प्रयोग का सुझाव दिया और यह इंगित किया कि वीर रसात्मक नाटयों के अभिनय की भी व्यवस्था की जानी चाहिए।

* * *

हिमाचल कला संस्कृति-भाषा अकादमी ने अपने संगीत-नाट्य सम्बन्धी कार्यक्रमों में जिन कलाकारों अब तक सहयोजित किया है, उनकी सूची अगले पृष्ठ पर दी जा रही है :—

—सम्पादक

अकादमी के संगीत-नृत्य-नाट्य कार्यक्रमों में सहयोजित कलाकारों की सूची

क्रमांक 1	नाम 2
1.	श्री कैलाश आहलूवालिया
2.	श्री सोमदत्त बट्टू
3.	श्री श्रीनिवास श्रीकान्त
4.	श्री ज्वाला प्रसाद शर्मा
5.	श्री अच्छर सिंह परमार
6.	कु0 वन्दना सूद
7.	कु0 शुभ्रा भट्टाचार्य
8.	कु0 शैली
9.	कु0 रीता तिवारी
10.	कु0 चन्द्रा
11.	श्री प्रेम लाल टेसू
12.	कु0 कला
13.	कु0 पूर्णिमा
14.	श्री श्याम किशोर
15.	श्री बेनू राम
16.	श्री संजीव सूद
17.	श्री चन्द्र प्रकाश
18.	श्री नन्दा राम
19.	श्री अशोक चौहान
20.	कु0 रीता मीरचन्दानी
21.	श्री मोहन सिंह
22.	श्रीमती कृष्णा छाबड़ा
23.	श्रीमती शशि शर्मा
24.	श्रीमती वीना परमार
25.	श्री राजीव शर्मा
26.	श्री सतीश
27.	श्री धनी राम तोमर
28.	श्री माक्षा
29.	श्रीमति भाक्षा
30.	कु0 पेमा
31.	कु0 कर्माडोलमा
32.	श्री पैलडन
33.	श्री लोब सौंग
34.	श्री थोंडुप
35.	श्री पैलगन
36.	श्री स्वांग
37.	श्री तेंन शिंग
38.	श्री नंगसा
49.	श्री केलसंग
40.	श्री स्वांग
41.	श्री निमंसकर
42.	श्री तेनजिन
43.	श्री लौ दिंग
44.	श्री गावंग
45.	श्री दोरजी
46.	श्री नंगसा
47.	श्री विद्या नन्द सरैक
48.	श्री प्रताप सिंघ
49.	श्री लेख राम
50.	श्रीमती शीला
51.	कुमारी सुभद्रा
52.	श्री सेवा राम
53.	श्री जीवन सिंह वर्मा
54.	श्री शेर जंग
55.	श्री अभिमन्यु
56.	श्री लक्ष्मी सिंह तोमर
57.	श्री हेत राम
58.	कुमारी कौशल्या
59.	श्री आज्ञा दत्त
60.	श्री जाती राम
61.	श्री क्षमा दत्त
62.	श्री कृष्ण लाल
63.	श्री माता राम अत्री
64.	श्री जय प्रकाश चौहान
65.	श्री अनुपम
66.	कु0 मृदुला कौशिश
67.	श्री राजन मिश्र
68.	श्री दीपक
69.	श्री योगेश गम्भीर
70.	श्री शेखर
71.	श्री जगदीश वर्मा
72.	श्री सोहन लाल
73.	श्री विजय छाबड़ा
74.	श्री सुनील
75.	कु0 बीना ठाकुर
76.	कु0 मीना ठाकुर
77.	कु0 उषा ठाकुर
78.	श्री अशोक हंस
89.	श्री कृष्ण कालिया
80.	श्री रतन लाल शर्मा

महासुई साहित्यकार/कलाकार परिचय

आचार्य दिवाकर दत्त शर्मा

आपका जन्म शिमला के निकट धामी म अक्तूबर सन् 1922 को हुआ। 1940 में आप ब्राह्मण सभा संस्कृत कालेज में प्राधानाचार्य बने। जून, 1969 में जब यह कालेज हिमाचल प्रदेश-सरकार ने ले लिया तभी से आप इस राजकीय संस्कृत कालेज के प्रधानाचार्य हैं। आप संस्कृत मासिक पत्रिका 'दिव्य ज्योति' के संस्थापक और सम्पादक हैं और आप के ही मनोयोग से हिमाचल की यह एक मात्र संस्कृत पत्रिका कई वर्षों से चल रही है। आपन अधिकांश सर्जनात्मक कार्य संस्कृत में किया है । सन् 1970 से आपने छुट पुट साहित्य कार्य हिन्दी में भी किया है। आप हिमाचन प्रदेश भाषा सलाहकार समिति के भी सदस्य थे और कला संस्कृति भाषा अकादमी के भी । संस्कृत एवं ज्योतिष शास्त्र के विषयों में आपके ग्रन्थ सराहनीय हैं।

श्री काहन सिह जमाल

आपका जन्म जुब्बल के एक गांव शाड़ी में हुआ। आपने बी0 ए0 तक शिक्षा प्राप्त की। साहित्य सर्जन के क्षेत्र में आपके प्रकाशन 'वक्त की आवाज', 'पंखुड़ियां, तथा 'शहीद प्रकाश' है। आप मूलतः उर्दू के कवि हैं। उर्दू की छाप आपकी पहाड़ी कविताओं में यत्र तत्र सर्वत्र झलकती है। आपने जीवन की सादगी ईमानदारी, और नैतिकता को लेकर पहाड़ी कविताएं कीं। भारत के उच्च स्तर के उर्दू अखबारों एवं रसालों में आपके कलाम छपते आए हैं। साहित्य के साथ साथ सामाजिक गतिविधियों में भी आपकी विशेष रुचि रही। आप 1945 से 1948 तक प्रजामण्डल जुब्बल के सचिव, 1954 में हिमाचल लेखा संघ के उपसभापति तथा 1971 में बजमे अदब के महा सचिव के पद पर रहे। आजकल आप सरकारी कर्मचारी के रूप में कार्य कर रहे हैं।

प्रो० हरि राम जसटा

आपका जन्म 12 अतूबर, 1932 को ग्राम बडैंयो, कोटखाई, हिमाचल प्रदेश में हुआ। आपने अंग्रेजी, राजनीति, तथा शिक्षा में स्नातकोत्तर परीक्षाएं पास कीं। गत 25 वर्षों से उर्दू, हिन्दी, पहाड़ी एवं अंग्रेजी में लिखते रहे हैं। हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी की त्रैमासिक पत्रिका सोमसी के सम्पादन-मण्डल के सदस्य हैं। आपने प्रसिद्ध अंग्रेजी कविताओं का पहाड़ी में अनुवाद भी किया है। शब्द मितव्ययिता और गम्भीरता आपकी काव्य शैली के विशेष गुण हैं। आपने हिन्दी व अंग्रेजी में अनेक पुस्तकें लिखी हैं।

सी० आर० बी० ललित

आपका जन्म जनवरी, 1947 को ज़िला शिमला के पौंड़िया ग्राम के ब्राह्मण परिवार में हुआ। आप पत्राचार पाठ्यक्रम के द्वारा एम0 ए0 कर रहे हैं। आपने उर्दू और हिन्दी में कई कवितायें लिखीं।

1973 में हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी द्वारा 500 रुपए की सहायतानुदान राशि द्वारा 'जूएणो र आणू' (चांदनी के आंसू) नामक पुस्तक पहाड़ी कविता संग्रह के रूप में प्रकाशित हुई। जूंएंणो रे आशू आपकी पुस्तक रोहतांग की देन है। आप की कविताएं आज के युग की नई चेतना को लिए हुए हैं। आपकी वाणी में शक्ति और शैली में नयापन है। आपकी कविताओं में सभी तरह क स्वर हैं जो आधुनिक जीवन की जटिलता को पकड़ने में सफल सिद्ध हुए हैं।

प्रो० नरेन्द्र अरुण

आप का जन्म 21 जनवरी, 1939 को राजा हरदेव सिंह के सूर्यवंशी घराने कुनिहार में हुआ। आपने एम0 ए0 तक शिक्षा प्राप्त की, अब आप शोध कार्य कर रहे हैं तथा राजकीय कालेज कुल्लू में प्राध्यापक के पद पर नियुक्त हैं।

आपने कई हिन्दी और पहाड़ी नाटक, एकांकी, कहानियां, लघु उपन्यास तथा कविताएं लिखीं। आप हिन्दी और पहाड़ी के सुलझे हुए कवि हैं। जीवन के कड़वे मीठे अनुभव का सहज परिचय आपकी रचनाओं में मिलता है।

श्री भीम दत्त काले

आप का जन्म पटियाला के एक अति लघु ग्राम तवातलाड़ा में हुआ। आपने बाल्यकाल में अपने पिता से ज्योतिष कर्मकाण्ड का शिक्षण प्राप्त किया। आपने शास्त्री तथा गायन की शिक्षा भी प्राप्त की। आपने सन् 1947 में भरतनाट्य शास्त्र के संगीताध्यायों का हिन्दी रूपान्तर किया। 1947 से अब तक शिमला में 'काले कला मन्दिर' के नाम से संगीत शिक्षा निःशुल्क प्रदान की। 1954 से 1972 तक स्थानीय सनातन धर्म कालिज में संगीताध्यक्ष के रूप में कार्य किया। आपने पहाड़ी में कई कविताएं लिखी।

श्री जयदेव 'किरण'

आप का जन्म 12 जनवरी, 1937 को ग्राम चौलाना (मलाउन) तहसील नालागढ़, जिला सोलन में हुआ। आपने बी0 ए0 तक शिक्षा प्राप्त की। आप हिन्दी, पहाड़ी व नेपाली में गद्य एवं पद्य लेखन करते हैं। आपका पहाड़ी में "पात्थरो रे माण्हु" पहला काव्य-संग्रह 1972 में प्रकाशित हुआ। आप हिमाचल विश्वविद्यालय से एम0 ए0 की परीक्षा दे रहे हैं। आपकी अनेक कविताएं तथा गीत आकाशवाणी शिमला से सुने जा सकते हैं।

श्री विजय कमार पण्डित

आपका जन्म 10 मार्च, 1905 को शगीन गांव रामपुर में हुआ। आपने बी0 ए0 तक शिक्षा प्राप्त की आपकी संगीत में भी विशेष रुचि रही।

आपने हिन्दी, उर्दू और पहाड़ी में कई नाटक, कविताएं तथा गीत लिखे जो कि अमर हिमाचल तथा हिमभारती में प्रकाशित हुए। आपने 15 वर्ष तक फिल्मों में अभिनय किया तथा पहाड़ी संगीत के क्षेत्र में उल्लेखनीय सहयोग दिया।

श्री हरदयाल सिंह चौहान

आपका जन्म 1929 में एक मध्यम कृषक परिवार में हुआ। अनुकूल वातावरण के न होने के बावजूद भी आपने परिश्रम करके राजनीति-शास्त्र में एम0 ए0 किया। सन् 1959 में आपका पहला उपन्यास 'सामाजिक कारा के बन्दी', तथा दो वर्ष के उपरान्त दूसरा उपन्यास 'तिनके और लहरें' प्रकाशित हुआ। ये दोनों उपन्यास हिमाचल की संस्कृति की अच्छी झलक प्रस्तुत करते हैं। इसके अतिरिक्त आपने हिन्दी में कई सामाजिक लेख, छोटी कविताएं तथा महासुई में अनेक अच्छे गीत लिखे, जिनमें आपने समाज के विभिन्न पहलुओं का अच्छा दिग्दर्शन किया है।

कुमारी मीना ठाकुर

आपका जन्म 7 सितम्बर, 1953 को कसुम्पटी के निकट क्वारा नामक ग्राम में हुआ। पूर्वकालीन जुनगा रियासत के राजपरिवार से आपका पारिवारिक सम्बन्ध है। आपने बी0ए0 तक शिक्षा प्राप्त की। साहित्य और संगीत के विषयों पर आपके 15 लेख विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में छपे हैं। साहित्य, संगीत और नृत्य ये तीन आपके प्रिय विषय हैं। कालेज के दिनों में आप राजकीय कालेज शिमला की लोक साहित्य-संगीत, परिषद की उपाध्यक्षा रही हैं।

इन साहित्यकारों के अतिरिक्त साहित्यजगत में अन्य अनेक ख्यातिप्राप्त महासुई लेखक कलाकार हैं जिन के जीवन परिचय पत्रिका के अगले अंकों में प्रकाशित करने की योजना है। इनमें सर्वश्री रत्न सिंह 'हिमेश' पद्मनाभ जोशी, केशव राम शर्मा, केशव शर्मा, जगदीश शर्मा, शकुन्तला शर्मा, विद्या नन्द सरैक, आचार्य रामानन्द आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। श्री गोवर्धन सिंह ने अपने शोधपूर्ण लेखों से प्रदेश के लेखकों में अपना विशिष्ट स्थान बनाया है। कुमारी भुवनेश्वरी राठौर तथा कुमारी त्रिभुवन रेखा की भी अनेक रचनाएं साहित्य जगत में समादृत हुई हैं। कलाकारों के लिए तो यह क्षेत्र प्रसिद्ध है ही। इन साहित्यकारों/कलाकारों के जीवनवृत-विवरण कार्यालय में यथा समय प्राप्त न होने के कारण इस अंक में प्रकाशित नहीं किए जा सके, इसका हमें खेद है।

—सम्पादक

समीक्षा

ग्रन्थ का नाम — विक्रमोर्वशीयम्
भाषान्तरकार — पं0 दुर्गादत्त शास्त्री
पृष्ठ — [चौरासी]

किसी भी भाषा के साहित्य के नवोन्मेष-काल में प्रायः अनुवाद का सहारा लेना पड़ता है। हिन्दी साहित्य की नाटक-विधा के विकास को ही ले लीजिए। जब हिन्दी में इस विधा का सूत्रपात हुआ तब शाकुन्तल, नहुष, मृच्छकटिक, उत्तररामचरित, मालतीमाधव आदि संस्कृत नाटकों के हिन्दी रूप प्रकाश में आए। उधर दुर्लभ बन्धु, भ्रमजाल, प्रेम-लीला, मन-भावन, साहसेन्द्रसाहस नाम से कुछ अंग्रेजी नाटक भी हिन्दी में अनूदित हुए। साथ ही कतिपय बंगला तथा मराठी नाटक भी हिन्दी में उलथाए गए। अनुवाद-वल्लरी अपनी उपादेयता के बलबूते पर निरन्तर विकसित होती रही। हर्ष का विषय है कि यह प्रवृत्ति आज पहाड़ी में भी दृष्टिगोचर हो रही है। भास के छः नाटकों का पहाड़ी भाषान्तर 'छनाट' नाम से पहाड़ी जगत् में पूर्वमेव प्रवेश कर चुका है। अब आया है कवि-कुल-कोकिल कालिदास द्वारा विरचित नाटक-विक्रमोर्वशीयम् का पहाड़ी रूप।

इसके अनुवादक हैं पं0 दुर्गादत्त जो 'छनाट' में सम्मिलित एक नाटक का पहले ही अनुवाद कर चुके हैं। इसके अतिरिक्त दुर्गादत्त जी को तीन मौलिक संस्कृत काव्यों—राष्ट्रपथप्रदर्शनम्, तर्जनी तथा मधुवर्षणम्—के पणयन का श्रेय भी प्राप्त है। पुरूरवा तथा उर्वशी की प्रणय-कथा पर आधारित विक्रमोर्वशीयम् पौर्वापर्य तथा कला-सौष्ठव की दृष्टि से मालविकाग्निमित्रम् तथा अभिज्ञानशाकुन्तलम् के बीच आता है। यह त्रोटक प्रसादपूर्ण तथा सरस शैली और रस परिपाक के लिये प्रशंसा का भाजन है। इसमें श्रृंगार के दोनों अंगों—विप्रलम्भ तथा संभोग—का उत्तम परिपोष हुआ है। इसकी दिव्या अभिसारिका नायिका उर्वशी तथा इसके धीरोदात्त नायक पुरूरवा सजीव पात्रों के रूप में चित्रित हुए हैं। इस उप-रूपक का अनुवाद-हेतु चयन उपयुक्त ही था।

विद्वान् अनुवादकार ने संस्कृत पद्यों के अनुवाद में कई स्थानों पर मूल संस्कृत छन्दोविधान का ही अनुसरण किया है। उदाहरण है :—

अग्रे यान्ति रथस्य रेणुपदवीं चूर्णीभवन्तो घनाः
पश्चाच्चक्रे च समं स्थितो ध्वजपटः प्राप्ते च वेगानिलात् ॥

अग्गे बद्दल घूड़ घूड़ बणदे हेठें भियोंदे रथे
पैया है घुमदा बड़ा चरखड़ा मालूम दो दो जिमे ।
घोड़े दे सिर बुंब्बल् न झुलदा बेगे कनें है खड़ा
गम्भे दा कपड़ा घुना च लगया जांदा कनारें उड़ी ।।

दोनों में शार्दूलविक्रीड़ित छन्द प्रयुक्त हुआ है । कई स्थानों पर मूल छन्द को तिलाञ्जलि दी गई है। ऐसे कुछ छंद हैं—आर्या, पृथ्वी, मञ्जुभाषिणी, वंशस्थ, हरिणी, वियोगिनी, पुष्पिताग्रा तथा अपरवक्त्रम् । इनका अभाव खटकता नहीं । प्रयुक्त छन्दों में उपजाति भाषान्तरकार को अधिक प्रिय है, ऐसा लगता है । शुद्ध संस्कृत परिपाटी के अनुसार अनुवादक ने पादान्त में अन्त्यानुप्रास के प्रयोग की अवहेलना की है । यदि ऐसा न किया जाता तो शायद कविताओं की सरसता और गेयता और बढ़ जाती । आखिर हरिऔध तथा मैथिलीशरण गुप्त सदृश कुछ हिन्दी कवियों ने संस्कृत के छन्दों में भी पादान्त में तुक का प्रयोग किया ही है । अस्तु! .... कहीं-कहीं शब्द-विन्यास अथवा छन्दोविधान के कारण स्वतन्त्र अनुवाद भी किया गया है । यह प्राय: आनन्द-दायक ही सिद्ध होता है । यथा:—

मन्दारमाला हिलदी बड़ी ऐह्
इसा दियां चूचुक उच्चयां च।
पता लगांदी दिल कंबणे दा
किनां बड़ा है डर जी इसा जो ।।

कुल मिलाकर पहाड़ी रूप में संस्कृत के वार्णिक तथा मात्रिक छन्दों का सुन्दर निर्वाह हुआ है । यह जानकर मेरा मन हर्षातिरेक-विभोर हो जाता है कि इतने दुरूह छन्दों के अपनाए जाने पर भी अनूदित कवितांशों में प्राण हैं, वेग है । उदाहरण के रूप में देखिए:—

बसन्त शोभा बुणणी बणांदा
बेलां नचांदा कलियां खलांदा ।
उदारता-प्यार-अमीर वायु
कामी बड़ा मैं इस जो पछाणां ।।

कितनी व्यंजना है!

अनुवाद रूप में अर्थ-मूलक अलंकार प्राय: सुरक्षित हैं; ध्वनिमूलक अलंकारों को बनाये रखना असम्भव था। अत: वे अनुवाद-यात्रा में मार्ग भटक गए हैं, पर हमें इस पर तनिक भी दु:ख नहीं हुआ है।

गद्य का भाषान्तर भी उतना ही सुन्दर बन पाया है जितना कि पद्य का । इस कथन को सिद्ध करने के लिए एक लघु संवादांश को उद्धृत करना पर्याप्त होगा । प्रस्तुत है:—

उर्वशी:—(झूठी-मूठीं जाणे च रुकावट दस्सी करी कनें राजे जो दिखदी दिखदी)

सखी चित्रलेखा, मेरा दुपट्टा तां झाड़िया च फसी गिया, इजो छुड़ां।

चित्रलेखा—(दिक्खी ने कनें हस्सी ने) अनीं 3 एह तां बुरे हालें फस्सी गीया । एह् तां छुड़ाणा बड़ा मुसकल है ।

उर्वशी:—भलिए, मखौल मत करें, इस जो छुड़ा ।

चित्रलेखा—सच है भैण । एह् छुड़ाणा है तां बड़ा मुसकल, पर तां वी छुड़ाणे दी कोसस करदी आं ।

उर्वशी—(मुस्कराई ने) प्यारी सखी, इन्हां गल्लां जो याद रखयां।

पहाड़ी-रूपान्तर में कुछ सूक्तियां अत्यन्त रोचक बन पाई हैं । कुछ नमूने पेश हैं:—

1. पहले बदलां दी पंक्ति सुझदी है तांई पिच्छें ते बिजली नजर औंदी है।
2. जिदियां हाखीं दुखणे आइयां होण सैह दीये दीया लोई नी दिक्खी सकदा।
3. झेली दुखे जो सुख जे मिले तां सिट्टा बड़ा है लगदा मनुक्खां।
4. जीरे दे हत्थे ते मच्छी छुटी जाए तां सैह बोलदा "चलो कोई नीं, पुन ही होई गिया।"

इस पुस्तक में न केवल मूल नाटक के प्राय: सभी गुण सुरक्षित हैं, अपितु कुछ गुणों का प्रथम बार प्रादुर्भाव अनुवाद-रूप में ही हुआ है।

मेरे विचार में कुछ संस्कृत शब्द इस अनुवाद के द्वारा पहली बार पहाड़ी में अवतीर्ण हुए हैं। ये शब्द हैं:—नलिनी, बलवती, धरा, यदि, नृपति, प्रभु-कृपा, परवश, शुक, शिशु, धैर्य, रोमांच, स्तन, विधु, उरु, मन्मथ, सुरपति। निश्चय ही इस से पहाड़ी शब्द-परिवार में कुछ और सलोने सदस्यों का प्रवेश हुआ है।

पं० दुर्गादत्त का प्रयास सुन्दर है, सफल है, अनुकरणीय है। हम आशा करते हैं कि अगली बार पं० दुर्गादत्त या कोई और विद्वान, पार्श्ववर्ती भाषाओं में लिखित कुछ नाटकों को भी पहाड़ी भाषा में उलथाने का बीड़ा उठाएंगे ।

समीक्षक :
कृष्ण चन्द्र शर्मा,
सचिव,
हिमाचल प्रदेश लोक सेवा आयोग,
शिमला-171002 ।

सार-संक्षेप विचारावली--

शिक्षा मन्त्री श्री दौलत राम चौहान के दिनांक 1-7-77 के भाषण से

अखण्ड और पूर्ण को लेकर सैद्धांतिक विचारणा होती है तथा खण्ड और अंश को लेकर व्यावहारिक।
समूचे भारत के लिये हम अखण्ड और सैद्धान्तिक विचारणा करते हैं तथा प्रदेशों और जनपदों के लिए व्यावहारिक
सैद्धान्तिक विचार से साहय की स्थापना होती है और व्यावहारिक विचार से उस स्थापित साहय
के निमित छोटे छोटे साधनों का निर्माण होता है। वे साधन उस साहय के पालक हों,
हिंसक नहीं, यह बात विवेकशील मनुष्य ने देखनी होती है। संस्कृति ही किसी देश को
विशिष्ट व्यक्तित्व प्रदान करती है और लोक-संस्कृति ही संस्कृति के शरीर की प्राणवायु है। लोक-संस्कृति का
एक प्रमुख माध्यम लोकभाषा है। लोकभाषा एक बहता नीर है, मानो गंगा है, सभी के लिये प्राप्य और मंगल-
कारिणी है। मानव-मस्तिष्क ने अनेक श्रमसाध्य विषयों का अनुसन्धान किया, उनकी अभिव्यक्ति के लिये
उस लोकभाषा-गंगा से कुछ नहरें और कूल्हें निकालीं और अपने अपने विषय के अनुरूप परिष्कृत और परिमार्जित
विषय-भाषाओं (सब्जैक्ट लैंगुएजिज) की विरचना की। लोक-भाषा और परिष्कृत भाषा एक दूसरे की पूरक
हैं। लोकहित के लिए जब मानव मस्तिष्क श्रमशील होकर कोई अनुसन्धान करता है तो परिष्कृत भाषा की आवश्यकता
पड़ती है और जब अनुसन्धान के फलों को लोकहित के निमित सभी को उपलब्ध करवाना चाहता है तो वह फिर
लोक-भाषा का प्रयोग करता है। लोकगीतों के आधार पर बनी लोक-कविताएं (पोपुलर पोएमज) लोकगीतों
के माधुर्य और साम्प्रतिक युगबोध की शक्ति दोनों की धातृ होती हैं। लोक कविताओं
में मूल भारतीय विचारधारा और राष्ट्रीय भाषा दोनों का घोल और प्रतिपादन तो लोकभाषा और परिष्कृत भाषा
दोनों का ग्रन्थिबंधन होगा। मंगलभवन अमंगलहारी लोकहित साधक राम हमारा आदर्श है। हमारा साध्य
लोकहित है, उस साध्य के लिए प्रत्येक परिस्थिति में सुचारु संचालन हमें राम से सीखते रहना है।

P&SHPS—1388-A.C.L./77-10-9-77—500.

FORM IV

(*See* rule 8)

1. **Place of Publication** .. .. Simla.
2. **Periodicity of its Publication** .. Quarterly.
3. **Printer's name** .. .. .. Shri K. C. Bhardwaj.
   Nationality .. .. .. Indian.
   (*a*) **Whether a citizen of India** .. Yes.
   (*b*) **If a foreigner, the country of origin.** .. N. A.
   Address .. .. .. Deputy Controller, Printing and Stationery, Himachal Pradesh, Simla-3.
4. **Publisher's name** .. .. Dr. Bansi Ram Sharma.
   Nationality .. .. .. Indian.
   (*a*) **Whether a citizen of India** .. Yes.
   (*b*) **If a foreigner, the country of origin.** .. N. A.
   Address .. .. .. Research Officer, Himachal Academy of Arts, Culture and Languages, Pari Mahal, Simla-9.
5. **Editor's name** .. .. .. Dr. Bansi Ram Sharma.
   Nationality .. .. .. Indian.
   (*a*) **Whether a citizen of Indian** .. Yes.
   (*b*) **If a foreigner, the country of origin.** .. N. A.
   Address .. .. .. Research Officer, Himachal Academy of Arts, Culture and Languages, Pari Mahal, Simla-9.

. **Names and addresses of individuals who own the news paper and partners or share-holders holding more than one per cent of the total capital.** .. Himachal Kala, Sanskriti, Bhasha Akademi, Pari Mahal, Simla-9.

I, Dr. Bansi Ram Sharma, hereby declare that the particulars given above are true to he best of my knowledge and belief.

Sd/-
B. R. SHARMA,
Publisher.

आर0 एन0 28217/75

निदेशक, शिक्षा विभाग, हि0 प्र0 द्वारा पत्राङ्क ई डी एन-एच (8)-6(3) 1/75, 24 फरवरी, 1975 के अनुसार प्रदेश के समस्त कालेजों, पाठशालाओं व जिला पुस्तकालयों के लिये स्वीकृत ।

हिमाचल कला-संस्कृति भाषा अकादमी, परिमहल, शिमला-9 द्वारा प्रसारित तथा उप-नियन्त्रक, मुद्रण तथा लेखन सामग्री, हिमाचल प्रदेश, शिमला-3 द्वारा मुद्रित ।